# विषय सची


| क्रम. सं. | अखयाय | पष्ट संख्या |
|---|---|---|
| 1. | जीव विज्ञान – परिचय | 3–5 |
| 2. | कोशिका | 6–12 |
| 3. | ऊतक संगठन | 13–19 |
| 4. | जीवधारियों का वर्गीकरण | 20–25 |
| 5. | श्वसन | 26–30 |
| 6. | पोषण | 31–35 |
| 7. | उत्सर्जन | 36–37 |
| 8. | जन्तओं में परिवहन | 38–41 |
| 9. | तंत्रिका तंत्र और अंत:स्त्रावी तंत्र | 42–50 |
| 10. | जनन | 51–53 |
| 11. | कंकाल तंत्र | 54–55 |
| 12. | स्वास्थ्य | 56–61 |
| 13. | शरीर की रक्षा प्रणाली | 62–63 |
| 14. | आनवांशिकी | 64–71 |
| 15. | जीवन का उदभव | 72–73 |


Gupta Classes

Gupta Classes

# 1. जीव विज्ञान - परिचय

**जीव विज्ञान** (Biology, बायोलॉजी) विज्ञान की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत जीवधारियों का अध्ययन किया जाता है।

**बायोलॉजी** (Biology ; Bios = जीवन, life + logos = अध्ययन) शब्द का प्रयोग सबसे पहले **लैमार्क** (Lamarck) तथा **ट्रविरेनस** (Treviranus) नामक वैज्ञानिकों ने सन् 1801 में किया था।

अरस्तु को **जीव विज्ञान का जनक** (Father of Biology) कहते हैं।

**जीव विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के जनक**

| *शाखा* | *जनक* |
|---|---|
| जीव विज्ञान (Biology) | अरस्तू |
| वनस्पति विज्ञान (Botany) | थियोफ्रैस्टस |
| जीवाश्मिकी (Palaeontology) | लियोनार्डो डी विन्सी |
| सुजननिकी (Eugenics) | एफ. गाल्टन |
| आधुनिक वनस्पति विज्ञान (Moden Botany) | लिनियस |
| प्रतिरक्षा विज्ञान (Immunology) | एडवर्ड जैनर |
| आनुवंशिकी (Genetics) | ग्रेगर जॉहन मेण्डल |
| आधुनिकी आनुवंशिकी (Modern Genetics) | टी.एच. मॉर्गन |
| कोशिका विज्ञान (Cytology) | रॉबर्ट हुक |
| वनस्पति चित्रण (Botanical Illustrations) | क्रेटियस |
| पादप शारीरिकी (Plant Anatomy) | एन. गिऊ |
| जन्तु विज्ञान (Zoology) | अरस्तू |
| वर्गिकी (Taxonomy) | लीनियस |
| चिकित्साशास्त्र (Medicine) | हीप्पोक्रेटस |
| औतिकी (Histology) | मार्सेलों मैल्पीजी |
| उत्परिवर्तन सिद्धान्त के जनक (Mutation Theory) | ह्यूगों डी. व्रीज |
| तुलनात्मक शारीरिकी (Comparative Anatomy) | जी. क्यूवियर |
| कवक विज्ञान (Mycology) | माइकेली |
| पादप कार्ययिकी (Plant Physiology) | स्टीफन हेल्स |
| जीवाणु विज्ञान (Bacteriology) | ल्यूवेनहॉक |
| सूक्ष्म जीव विज्ञान (Microbiology) | लूई पाश्चर |
| भारतीय कवक विज्ञान (Indian Mycology) | ई. जे. बुट्लर |
| भारतीय ब्रायोलॉजी (Indian Bryology) | आर. एस. कश्यप |
| भारतीय पारिस्थितिकी (Indian Ecology) | आर. मिश्रा |
| भारतीय शैवाल विज्ञान (Indian Phycology) | एम. ओ. ए. आयंगर |
| आधुनिक भ्रूण विज्ञान (Modern Embroyology) | वॉन बेयर |

## जीवों के सामान्य लक्षण
## (Common Features of Living Beings)

सभी जीवों में विभिन्नताओं के बावजूद कुछ विशेषतायें या सामान्य लक्षण पाये जाते हैं, जिनके आधार पर उन्हें निर्जीव वस्तुओं से अलग किया जाता है। इन लक्षणों या विशेषताओं को ही जैविक क्रियायें या जीवों का लक्षण कहते हैं। जीवों के सामान्य लक्षण निम्नानुसार हैं –

**कोशिकीय संगठन (Cellular organisation) :** कुछ जीवों को छोड़कर सभी जीवों में कोशिकीय संगठन पाया जाता है तथा वे बहुत सी कोशिकाओ से बने होते हैं।

**उपापचयी क्रियायें (Metabolic activities) :** जीवधारियों के शरीर में कुछ आंतरिक क्रियायें होती हैं, जिन्हें उपापचयी क्रियायें कहते हैं। इनमें से कुछ क्रियायें रचनात्मक (anabolic) होती हैं, जिनसे जीवद्रव्य बनता है तथा ऊर्जा संचित (store) होती है, जबकि कुछ क्रियायें विनाशात्मक (catabolic) तथा उनमें जीवद्रव्य का ह्रास होता है तथा ऊर्जा मुक्त होती है।

**वृद्धि (Growth) :** सभी जीवधारियों में वृद्धि करने की

क्षमता पायी जाती है।

**आकार (Form) :** प्रत्येक जीवधारी के शारीर का एक निष्चित आकार होता है।

**गति (Movement) :** सभी जीवों में प्रचलन या गति का गुण पाया जाता है।

**उद्दीपनशीलता (Irritability) :** प्रत्येक जीवधारी में वातावरण में संपन्न होने वाले भौतिक एवं रासायनिक उद्दीपनों को ग्रहण करने की क्षमता पायी जाती है। इसे ही उद्दीपनशीलता कहते हैं।

**श्वसन (Respiration) :** प्रत्येक जीवधारी श्वसन करता है। इस क्रिया में जीव आक्सीजन लेता है तथा कार्बन डाइआक्साइड छोड़ता है। इस क्रिया के परिणमस्वरूप ऊर्जा मुक्त होती है। यह ऊर्जा जीवधारियों की जैविक क्रियाओं में प्रयुक्त होती है।

**अनुकूलन (Adaptation) :** प्रत्येक जीवधारी में अनुकूलन की क्षमता पायी जाती है, जिसके फलस्वरूप वह अपने आपको परिस्थितियों के अनुकूल ढालता है।

**प्रजनन (Reproduction) :** प्रत्येक जीवधारी में प्रजनन की क्षमता पायी जाती है, जिसके फलस्वरूप वह अपने ही समान जीव उत्पन्न करता है।

**पोषण (Nutrition) :** प्रत्येक जीवधारी ऊर्जा प्राप्त करने के लिये भोजन करता है, जिसे पोषण कहते हैं। पोषण के फलस्वरूप निर्मित ऊर्जा का प्रयोग जीवधारी विभिन्न कार्यों में करता है।

**जीवन चक्र (Life-cycle) :** प्रत्येक जीवधारी एक निष्चित जीवन चक्र का पालन करता है। जीवनचक्र में जन्म, वृद्धि, प्रजनन तथा मृत्यु इत्यादि क्रियायें क्रमबद्ध ढंग से होती हैं।

**मृत्यु (Death) :** प्रत्येक जीवधारी में एक ऐसी अवस्था भी आती है, जब उसकी समस्त जैविक क्रियायें बन्द हो जाती हैं तथा जीवधारी निर्जीव हो जाता है अर्थात उसकी मृत्यु हो जाती है।

## जीव विज्ञान की प्रमुख शाखाएँ

**वर्गिकी (Taxonomy) :** जीव विज्ञान की इस शाखा में जीवों को खोजने, पहचानने, उनका नामकरण करने तथा अंत में उनके गुणों एवं उनकी विशेषताओं के आधार पर उन्हें निष्चित समूह या वर्ग में रखने का कार्य करते हैं।

**आकारिकी (Morphology) :** इस शाखा में जीवों के स्वरूप (form) और उनके बाह्य आकार (external features) का अध्ययन करते हैं।

**शारीरिक (Anatomy) :** इसमें जंतुओं एवं पौधों की आंतरिक संरचनाओं का अध्ययन किया जाता है।

**भौतिकी (Histology) :** इसके अंतर्गत जीवों के विभिन्न प्रकार के उतकों का अध्ययन किया जाता है।

**कार्यिकी (Physiology) :** इसमें जीवों के अन्दर होने वाली विभिन्न जैविक क्रियाओं जैसे – पाचन, श्वसन, उत्सर्जन आदि का अध्ययन किया जाता है।

**कोशिका जीव विज्ञान (Cell Biology or Cytology):** इसमें कोशिकाओं की संरचना, कार्य, प्रजनन और जीवन चक्र का अध्ययन किया जाता है।

**जीव रसायन (Biochemistry) :** जीवविज्ञान की इस शाखा के अंतर्गत जीवित कोशिकाओं के अंदर उपस्थित विभिन्न रासायनिक पदार्थों जैसे – कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्ल तथा उपापचयी क्रियाओं में उनके योगदान का अध्ययन करते हैं।

**आणविक जीव विज्ञान (Molecular Biology) :** इसमें कोशिकाओं में उपस्थित आनुवंशिक पदार्थों का अध्ययन किया जाता है।

**भ्रौणिकी (Embryology) :** जीव विज्ञान की इस शाखा के अंतर्गत युग्मक जनन (gametogenesis), निषेचन (fertilisation), युग्मनज (zygote) तथा भ्रूणों (embryo) की रचना का अध्ययन किया जाता है।

**आनुवांशिकी (Genetics) :** इसके अंतर्गत, जीवों में पायी जाने वाली विभिन्नता, समानता एव आनुवांशिकता का अध्ययन किया जाता है।

**पारिस्थितिकी (Ecology) :** वह शाखा है, जिसमें जीवों के आपसी और वातावरण के संबंधों का अध्ययन किया जाता है।

**जीवाश्मिकी (Palaeontology) :** इसमें जीवाश्मों (fossils) का अध्ययन किया जाता है। पादप जीवाश्मिकी (Palaeobotany) में पादप जीवाश्मों का तथा जंतु जीवाश्मिकी (Palaeozoology) में जंतु जीवाश्मों का अध्ययन किया जाता है।

**मानव विज्ञान (Anthropology) :** इस शाखा में मानव के उद्भव एवं विकास संबंधी तथ्यों का अध्ययन करते हैं।

**अंतरिक्ष जीव विज्ञान (Exobiology) :** इस शाखा के अंतर्गत पृथ्वी के अलावा अन्य ग्रहों में जीवन की संभावनाओं इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

**सुजननिकी (Eugenics) :** इस शाखा के अंतर्गत आनुवंशिकता के आधार पर मानव जाति को श्रेष्ठ बनाये जाने की विधियों का अध्ययन करते है।



Gupta Classes

**मधुमक्खी पालन (Apiculture) :** इसमें मधुमक्खियों के पालन से संबंधित विभिन्न तथ्यों का अध्ययन करते हैं।

**जीवाणु विज्ञान (Bacteriology) :** इसके अंतर्गत जीवाणुओं का अध्ययन किया जाता है।

**रेष्ठाम कीट पालन (Sericulture) :** इसके अंतर्गत सिल्क पैदा करने वाले कीड़ों को पालने तथा उनसे रेष्ठाम निकालने की विधि का अध्ययन करते हैं।

**मत्स्य पालन (Pisciculture) :** इसके अंतर्गत मत्स्य पालन का अध्ययन करते हैं।

**फोरेन्सिक विज्ञान (Forensic Science) :** जीव विज्ञान की इस ष्ठाखा के अंतर्गत रूधिर वर्ग, अंगुलियों के चिन्ह (finger prints) इत्यादि का अध्ययन कर इसका उपयोग अपराधी का पता लगाने में किया जाता है।

**दुग्ध विज्ञान (Dairy Science) :** इसके अंतर्गत दुग्ध उत्पादन की विधियों तथा उसे बढ़ावा देने के तरीकों का अध्ययन करते हैं।

**कुक्कुट पालन विज्ञान (Poultry Science) :** इसके अंतर्गत मुर्गी, हंस, बत्तख इत्यादि के पालन-पोषण तथा उनके सुधारों इत्यादि का अध्ययन करते हैं।

**वन विज्ञान (Forestry) :** इसके तहत् वनरोपण की विधि यों, उनके संरक्षण एव कटाई इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

**पष्ठु विज्ञान (Veterinary Science) :** इसके अंतर्गत पालतू पष्ठुओं के रख-रखाव तथा उनके स्वास्थ्य आदि का अध्ययन करते हैं।

**विकास (Evolution) :** इसमें जीवों के उद्भव एवं विकास का अध्ययन किया जाता है।

**पुष्प विज्ञान (Anthology) :** इसमें पुष्पों का अध्ययन किया जाता है।

**पक्षी विज्ञान (Ornithology) :** इसमें पक्षियों का अध्ययन किया जाता है।

**मत्स्य विज्ञान (Ichthyology) :** इसमें मछलियों का अध्ययन किया जाता है।

**फल विज्ञान (Pomology) :** इसमें फलों का अध्ययन किया जाता है।

**भेषगुणज विज्ञान (Pharmacology) :** दवाइयों से सम्बंधित अध्ययन तथा दवाईयां बनाने के तरीकों इत्यादि का अध्ययन इस ष्ठाखा में किया जाता है।

**वष्ठ संवर्धन (Arboriculture) :** सजावटी वष्ठ तथा झाड़ियों का अध्ययन किया जाता है।

**उद्यान विज्ञान (Horticulture) :** उद्यानों का अध्ययन। किया जाता है।

**सब्जियों की कृषि (Olericulture) :** सब्जियों का अध्ययन किया जाता है।

**कॉर्डियोलॉजी (Cardiology) :** हृदय की संरचना एवं कार्य का अध्ययन किया जाता है।

**हिमैटोलॉजी (Haematology) :** रूधिर की संरचना एवं कार्य का अध्ययन किया जाता है।

**न्यूरोलॉजी (Neurology) :** तंत्रिका तंत्र (nervous system) की संरचना एवं कार्यो का अध्ययन किया जाता है।

**क्रायोजेनिक्स (Cryogenics) :** जंतुओं के ष्ठारीर पर ष्ठीत (ठंड) का अध्ययन किया जाता है।

**इम्यूनोलॉजी (Immunology) :** जंतुओं के ष्ठारीर की प्रतिरोध क क्षमता (resistance power) का अध्ययन किया जाता है।

Gupta Classes

# 2. कोशिका

- प्रत्येक जीवधारी का शरीर एक या अनेक छोटी–छोटी रचनाओं से निर्मित होता है, जिन्हें कोशिका (Cell) कहते हैं, कोशिका जीवधारियों की रचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई है। कोशिका की खोज 1665 में **राबर्ट हुक** ने की। राबर्ट हुक का अध्ययन उनकी पुस्तक माइक्रोग्राफिया (Micrographia) में प्रकाशित हुआ।

## कोष्ठिका विज्ञान की महत्वपूर्ण खोज

| तिथि | वैज्ञानिक | खोज |
|---|---|---|
| 1833 | राबर्ट ब्राउन | केन्द्रक |
| 1838 | कार्टी व डुजार्डिन | जीवद्रव्य (प्रोटोप्लाज्म) |
| 1861 | शूल्ज | जीवद्रव्य सिद्धान्त |
| 1867 | केमेलियो गॉल्गी | गॉल्गी बॉडी उपकरण |
| 1869 | फ्रेडरिक मिशर | केन्द्रकीय अम्ल (Nuclein or Nucleic acid) |
| 1888 | वाल्डेयर | क्रोमोसोम |
| 1955 | पैलाडे | राइबोसोम |
| 1957 | डी डुवे | लाइसोसोम |
| 1850 | बेन्डा | माइटोकॉन्ड्रिया |
| 1909 | जोहेन्सन | जीन शब्द का प्रतिपादन |
| 1897 | गार्नियर | अंतः प्रद्रव्य जालिका |

## कोष्ठिका के प्रकार

- रचना के आधार पर कोशिकाएं दो तरह की होती हैं-
  1. प्रोकैरियोट कोशिका (Procaryote Cell)
  2. यूकैरियोट कोशिका (Eucaryote Cell)

## कोष्ठिका की आकृति एवं आकार

- **आकृति –** बेलनाकार, अण्डाकार, गोलाकार, आयताकार, बहुभुजी।
- सामान्यतः इसकी लम्बाई, चौड़ाई व मोटाई (10µ - 200µ) तक होती है।
- सबसे छोटी कोशिका माइकोप्लाज्मा गैलिसेप्टिकमा (Myco Plasma Galliseptiama) (व्यास–0.1µ)
- सबसे बड़ी कोशिका ऑस्ट्रिच (शुतुरमुर्ग) पक्षी के अंडे की होती है।
- मनुष्य में कोशिकाओं की संख्या $10^{14}$ आंकी गई है।

## कोष्ठिका के मुख्य भाग

**(Main Parts of Cell)**

1. **कोष्ठिका भित्ति (Cell Wall)**

   यह अर्द्ध ठोस एवं बाह्य परत है जो कोशिका द्रव्य (Cytoplasm) से निर्मित पदार्थ है। यह शैवालों एवं हरित पौधों में सेलुलोज से निर्मित होती है तथा कवकों में यह काइटिन की बनी होती है। जन्तु कोशिकाओं में इसका अभाव होता है। कोशिका भित्ति केवल पादप कोशिकाओं में पायी जाती है।

2. **जीवद्रव्य कला (Cell membrance)**

   इसकी संरचना के बारे में सर्वाधिक मान्यता फ्लूड मोजेक आकार (Fluid Mosaic Model) को मिली है। इसका मुख्य कार्य विसरण या जल का परासरण (Osmosis) क्रिया पर नियंत्रण, ATP बनाने एवं इलेक्ट्रॉन के आवागमन (Carrier) हेतु कार्य करना है।

3. **माइटोकॉन्ड्रिया ( सूत्रकणिका )**

   ये दंडाकार, पुटिकायमय कोशिकांग है, प्रत्येक दोहरी झिल्ली से घिरा होता है। इसमे एंजाइम द्वारा कोशिकीय श्वसन होता है, जिससे ऊर्जा उत्पन्न होती है, इसी कारण इसे **कोशिका का ऊर्जाघर** कहा जाता है। माइटोकॉन्ड्रिया में कोशिका श्वसन से संबंधित कार्य, ATP का निर्माण एवं भोजन का ऑक्सीकरण होता है।

4. **लवक (Plastids)**

   ये केवल पादप कोशिकाओं में पाए जाते हैं, अधिकतर लवक में वर्णक होते हैं। लवक तीन प्रकार के होते हैं।

   **i) अवर्णी लवक** (Leucoplast)

   - रंगहीन एवं अनियमित आकार, इसमें पट्टलिका (ग्रेना) नहीं रहते हैं।



Gupta Classes

- ये उन भागों में मिलते हैं जहाँ प्रकाश नही पहुँचता जैसे– भूमिगत जड़ व तना।
- यदि अवर्णी लवक में स्टार्च संग्रहित हो तो इसे **एमाइलोप्लास्ट**, यदि वसा एवं तेल संग्रहित हो तो **इलाइयोप्लास्ट** एवं प्रोटीन संग्रहित हो तो **प्रोटीनोप्लास्ट** कहते हैं।

**ii) वर्णीलवक** (Chromoplast)

- रंगीन वर्णक द्रव्य : ये लवक फलों के छिलके, फूलों के पेटल्स (पंखुड़ियों) में पाए जाते हैं।
- लाल नारंगी रंग के वर्णक में **कैरोटिन**, पीले रंग के वर्णक में **जैन्थोफिल**, टमाटर मे **लाइकोपेन**, चुकन्दर में वीटरमीन वर्णक जाए जाते हैं।

**iii) हरित लवक** (Chloroplast)

- हरे पौधे इनकी सहायता से प्रकाश संश्लेषण करते हैं।
- हरित लवक में पर्णहरित (Chlorophyll) पाया जाता है, जिसके कारण पौधे हरे दिखते हैं।
- इसमें कैरोटिन एवं जैन्थोफिल नामक वर्णक भी पाया जाता है, जिनसे पत्तियों का रंग पीला होता है।

### 5. गॉल्गीकाय (Golgibody)

यह जब पौधों में छोटी इकाइयों में होते हैं तो जालीकाय (डिक्टियोसोम्) कहलाते हैं। यह कोशिका का स्त्रावी अंगक (Secretary Organ) है। यह मुख्यतः कोशिकाभित्ति और Cell plate का निर्माण करता है, इसमें वसा एवं प्रोटीन अधिक होते हैं किन्तु राइबोसोम कण नहीं होते। सबसे पहली बार इसे बिल्ली की कोशिका में देखा गया। ये कोशिका भित्ति एवं लाइसोसोम का निर्माण करते हैं।

### 6. लाइसोसोम (Lysosome)

यह इकाई झिल्ली की गोलाकार संरचना है, इसमें 24 प्रकार के जल अपघटक एन्जाइम पाए जाते हैं, इसका मुख्य कार्य अंतः कोशिकी पाचन है। यह कोशिका विभाजन में सहायक होता है, पाचन के समय स्वयं फटकर पदार्थों का पाचन करता है, इसलिए इसे **आत्महत्या की थैली** (Suicide bage) भी कहते हैं। यह Carcino-genesis में योगदान करता है, जिसमें सामान्य कोशिका, कैंसर कोशिका (Cancer cell) का रूप धारण कर लेती है।

### 7. अंत:प्रद्रव्य जालिका (Endoplasmic Recticulum)

इसका अविष्कार 1897 ई. में **गार्नियर** ने किया। ये नलिकानुमा खोखली रचनाएं होती हैं, जिसके अंदर गाढ़ा द्रव्य भरा होता है। ये विषाणु, जीवाणु, नील हरित शैवाल तथा स्तनधारियों के लाल रक्त कण (RBC) को छोड़कर सभी अन्य कोशिकाओं में पाए जाते हैं।

इसके दो प्रकार हैं–

**i) खुरदरा ER–** इनकी सतह पर राइबोसोम पाए जाते हैं, प्रोटीन संश्लेषण के लिए।

**ii) चिकना ER–** इनकी सतह पर राइबोसोम नहीं पाए जाते हैं, लिपिड संश्लेषण के लिए। राइबोसोम कोशिका द्रव्य में अलग से भी पाए जाते हैं।

**ER के मुख्य कार्य**

1. प्रोटीन संचय करना,
2. ग्लाइकोजन उपापचय में सहायता करना,
3. विभिन्न आनुवंशिक पदार्थों को कोशिका के अंगों तक पहुँचाना।

### 8. सूक्ष्म काय (Microbodies)

- इसमें एकल कोशिका झिल्ली की परत पायी जाती है। ये थैलीनुमा रचनाएँ, पादप एवं जन्तु कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य में बिखरी हुई पाई जाती हैं।
- इनमें एन्जाइम भरा होता है। इनका निर्माण **ER** और **गॉल्गीकाय** से होता है।

माइक्रोबॉडीज दो तरह के होते हैं–

**i) परऑक्सीसोम**– जो प्रकाश–श्वसन (Photo-respiration) में सहायक होता है।

**ii) ग्लाइऑक्सीसोम**– जो ग्लाइऑक्सालेट चक्र में भाग लेता है। यह मुख्यतः वसा युक्त पादप कोशिकाओं में पाया जाता है।

### 9. केन्द्रक (Nucleus)

- केन्द्रक, कोशिका का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। यह कोशिका में होने वाली समस्त **जैविक क्रियाओं का नियंत्रण** करता है। इसलिए इसे कोशिका का **नियंत्रण कक्ष** भी कहते हैं।
- यह स्तनधारियों की **लाल रक्त कणिकाओं** में नहीं पाया जाता है।
- कुछ प्रोटोजोआ एवं शैवाल व कवकों की कुछ जातियों में एक से अधिक केन्द्रक पाए जाते हैं।

- पादप कोशिका में इस स्थिति को संकोशिकी (Coenocytic) तथा जन्तु कोशिकाओं में बहुकेन्द्रकी (Syncytical) कहते हैं।
- जीवाणु तथा नील–हरित शैवालों में केन्द्रक के स्थान पर क्रोमेटिन पदार्थ कोशिका के मध्य में फैला रहता है।
- ऐसे केन्द्रक में केन्द्रक कला नहीं होती है। ऐसे केन्द्रक वाली कोशिका प्रोकैरियाटिक कोशिका कहलाती है।
- केन्द्रक में DNA, RNA और क्रोमोसोम पाये जाते है, इसलिए केन्द्रक का आनुवांशिकी में महत्वपूर्ण स्थान है।

**केन्द्रक के भाग –** मुख्यतः चार भाग

**i) केन्द्रक कला** (Nuclear membrance)

यह एक द्विस्तरीय झिल्ली है, बाहरी झिल्ली, यह एक ER से जुड़ी होती है, जिसपर राइबोसोम कण होते हैं एवं भीतरी झिल्ली सपाट होती है। केन्द्रककला में जगह–जगह पर सूक्ष्मछिद्र होते हैं, जिसके द्वारा केन्द्रक द्रव्य एवं कोशिका द्रव्य में विभिन्न पदार्थों का आदान–प्रदान होता है। केन्द्रक–कला कोशिका विभाजन के दौरान समाप्त हो जाती है।

**ii) केन्द्रक द्रव्य** (Nucleoplasm)

यह एन्जाइम गतिविधियों का केन्द्र है। इसमें गुणसूत्र और केन्द्रिका धंसे रहते हैं, यह तर्कु तंतु निर्माण (Spindle fiber formation) में भाग लेता है।

**iii) केन्द्रिका** (Nucleuolus)

इसके चारों ओर केन्द्रक–कला (Nuclear membrane) अनुपस्थित होती है। यह RNA और फास्फोलिपिड्स से बने होते हैं। केन्द्रिका, कोशिका विभाजन में प्रोफेज के दौरान समाप्त हो जाती है तथा टीलोफेज के दौरान पुनः उत्पन्न हो जाती है। केन्द्रिका में r-RNA (राइबोसोमल RNA) का संश्लेषण होता है।

**iv) क्रोमैटिन रेष्ठो/तन्तु** (Chromatin fibre)

यह मुख्यतया DNA से बना होता है। यह आनुवंशिक सूचनाओं को संचित करने व उन्हें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में प्रेषित करने के लिए उत्तरदायी है। कोशिका विभाजन के समय यह सघन छड़नुमा पिंडो–गुणसूत्रों (Chromosome) में संघनित हो जाते हैं, जो DNA के ही खंड होते हैं।

**10. क्रोमोसोम अथवा गुणसूत्र (Chromosome)**

- विभाजन के समय क्रोमेटिन जाल या रेशेदार गुणसूत्रों में बदल जाते हैं।
- गुणसूत्र को सबसे पहले हाफमिस्टर (Hofmeister) ने 1848 मे Pollen Mother Cell Tradescantia में देखा।
- गुणसूत्रों को आनुवंशिकीय वाहक भी कहते हैं, रासायनिक दृष्टि से गुणसूत्र न्यूक्लियोप्रोटीन के अणुओं से बने होते हैं।

**गुणसूत्रों का कार्य**

- आनुवंशिकी गुणों एवं लक्षणों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुँचाना।

**11. राइबोसोम**

- **खोज 1955 – पैलाडे**
- r-RNA का 2/3 भाग इससे बना होता है, राइबोसोम मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं: कोशिका में, और

(i) 70 type – यह प्रोकैरियोटिक कोशिका में

(ii) 80 type – यह यूकैरियोटिक कोशिका में पाया जाता है।

- इसका मुख्य कार्य **प्रोटीन संश्लेषण** होता है इसलिए इसे **प्रोटीन की फैक्ट्री** भी कहते हैं।
- ये क्लोरोप्लास्ट, केन्द्रक, माइटोकॉन्ड्रिया, ER तथा कोशिका द्रव्य में पाये जाते हैं।

**12. सेन्ट्रोसोम (Centrosome)**

सेन्ट्रोसोम **केवल प्राणी कोशिकाओं** में पाया जाता है। यह दो सेन्ट्रीयोलों (तारक केन्द्रों) से बना होता है, इसे डिप्लोसोम भी कहते हैं। इसका मुख्य कार्य कोशिका विभाजन के समय तर्कु तन्तु (Spindle fibre) बनाना है।

**13. स्फीरोसोम (Sphaerosome)**

इसकी प्रकृति वसीय होती है और इसका मुख्य कार्य वसा संश्लेषित करना है। एकल कोशिका झिल्ली की परत से घिरी होती है। इसका निर्माण अन्तः प्रद्रव्य जालिका (ER) से होता है।

## DNA और RNA

### DNA (De oxyribonucleic Acid)

- DNA एक प्रकार का न्यूक्लिक अम्ल है, जिसका अणुभार उच्च होता है। DNA में डी–ऑक्सीराइबोज शर्करा और

फास्फोरिक अम्ल के अलावा एडीनीन, ग्वानिन, थाइमिन एवं साइटोसिन नामक नाइट्रोजनी क्षारक भी पाए जाते हैं।

- 1953 में **वाटसन** और **क्रिक** ने DNA का डबल हेलिक्स माडल (Double Helix Model) बताया जिसके लिए उन्हें 1962 में नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

**DNA के कार्य**

- DNA आनुवंशिक गुणों का वाहक एवं जीवन का रचनाकर्त्ता है।
- यह एन्जाइम व प्रोटीन के निर्माण को नियंत्रित करता है।

### RNA (Ribonucleic Acid)

- यह केन्द्रक में थोड़ी मात्रा में तथा कोशिकाद्रव्य राइबोसोम एवं अन्य कोशिकांगों में अधिकता में पाया जाता है। इसकी संरचना में सदैव एक सूत्र या कुण्डल होता है, अपवाद– **''रिहओ''** (Rheo) नामक वायरस। RNA दो सूत्रों या श्रृंखलाओं का बना होता है, इसका अणुभार DNA से कम होता है, RNA में थाइमिन के स्थान पर यूरेसिल (पाइरिमिडिन) नामक क्षारक पाया जाता है।

**RNA के कार्य**

1. यह मानव बुद्धि की तीव्रता बढ़ाता है।
2. प्रोटीन का संश्लेषण करता है।
3. कुछ पादप वाइरसों में यह आनुवंशिक पदार्थ के वाहक का कार्य करता है।

**RNA** तीन प्रकार का होता है **:–**

- **राइबोसोमल RNA** (Ribosomal RNA or r-RNA)

  ये राइबोसोम में पाए जाते हैं। यह केन्द्रिका में DNA से बनता है। यह कुल RNA का 80% होता है।

- **संदेशवाहक** (Messenger - RNA or m-RNA)

  कुल RNA का 3.5%, DNA से बनता है। यह किस प्रकार के प्रोटीन का निर्माण होना है, इसकी सूचना लाता है। अमीनों अम्ल को चुनने में मदद करता है, इसका नामांकरण **जैकब** और **मोनाड** ने किया।

- **स्थानांतरण** (t-RNA or Soluble RNA)

  कुल RNA का 10–15% भाग, सबसे छोटा होता है। कोशिका द्रव्य में पाया जाता है तथा मैसेन्जर RNA और अमीनो एसिड में संबंध स्थापित करता है यह प्रोटीन संश्लेषण के समय अमीनों अम्लों को एकत्र कर राइबोसोम तक ले जाता है।

## कोशिका विभाजन

### (Cell Division)

- कोशिका विभाजन वह क्रिया है जिसके द्वारा कोशिकाएं गुणन या अपनी ही जैसी अन्य कोशिकाओं का निर्माण करती हैं, जो जीवों की वृद्धि, विकास एवं निरंतरता को बनाए रखती है।
- कोशिका विभाजन की प्रक्रिया को सर्वप्रथम **फ्लेमिंग** नामक वैज्ञानिक ने 1882 में एक सरीसृप टाइट्यूरस मस्कुलोसा (Triturus Masculosa) में देखा था।
- कोशिका विभाजन तीन प्रकार का होता है।

1. समसूत्री कोशिका विभाजन (Mitosis)
2. अर्द्ध सूत्री कोशिका विभाजन (Meiosis)
3. असूत्री विभाजन (Amitosis)

**1. समसूत्री कोशिका विभाजन (Mitosis)**

- इस विभाजन में मातृ कोशिका का विभाजन होने पर दो कोशिकाएं बनती हैं, इस कारण संतति कोशिका (daughter cell) के गुणसूत्रों की संख्या मातृ कोशिका के बराबर होती है। इसलिए इसे समसूत्री कोशिका विभाजन कहते हैं। यह विभाजन कायिक या दैहिक कोशिका में होता है।
- कुछ निम्न श्रेणी के जीव, जिनमें निषेचन (Fertilisation) नहीं होता है, इसी विधि के द्वारा अलैंगिक प्रजनन करते है जैसे– कवक, शैवाल , प्रोटोजोआ, इत्यादि। समसूत्री विभाजन दो अवस्थाओं में पूरा होता है।
- **अंतरावस्था (Interphase)**

  इस अवस्था में कोशिका, विभाजन की तैयारी करती है। इस अवस्था की तीन उप–अवस्थायें होती हैं–

  **i) वृद्धि उप–अवस्था प्रथम (G1 Phase - Post mitotic phase)**

  इसके अंतर्गत नये केन्द्रक और कोशिका के लिए RNA व प्रोटीन का संश्लेषण होता है इसके लिए गुणसूत्र खुले होते हैं, इसी खुले गुणसूत्र के DNA से RNA का निर्माण होता है।

  **ii) संश्लेषण उप–अवस्था प्रथम (S Phase - Phase of DNA Synthesis)**

Gupta Classes

इसके अंतर्गत DNA का अनुलिपिकरण होता है अर्थात् **DNA की मात्रा दुगनी** हो जाती है, जिसके कारण प्रत्येक गुणसूत्र से दो अर्द्धसूत्र (Chromatids) बनते हैं।

**iii) वृद्धि उप-अवस्था (G2 Phase - Post Mitotic Phase)**

इस अवस्था में DNA का निर्माण पूरा होता है तथा नई कोशिका के लिए RNA प्रोटीन व अन्य वस्तुओं का संश्लेषण होता है।

- **एम. उप-अवस्था (M Phase - Mitotic Phase)**

इस अवस्था में समसूत्री विभाजन की वास्तविक प्रक्रिया संपन्न होती है, जो दो चरणों में पूरी होती है।

**i) केन्द्रक विभाजन ( प्रथम चरण )**

इसकी चार अवस्थाएँ होती हैः

**क ) पूर्वावस्था** (Prophase)

- केन्द्रक में क्रोमैटिन जाल, क्रोमोसोम में बदल जाते हैं।
- सेन्ट्रोसोम में दोनों सेन्ट्रिओल ध्रुवों पर चले आते हैं।
- केन्द्रीय झिल्ली और केन्द्रिक (Neucleuous) लुप्त हो जाते हैं।

**ख ) मध्यावस्था** (Metaphase)

- गुणसूत्र छोटे और मोटे हो जाते हैं।
- सेन्ट्रिओल जो ध्रुवों पर होते है, उससे तर्कु तंतु का निर्माण होता है।
- गुणसूत्र, कोशिका की मध्य रेखा पर व्यवस्थित हो जाते हैं।
- इसके सेन्ट्रोमियर तर्कु तंतुओं से जुड़ जाते हैं।

**ग ) पश्चावस्था** (Anaphase)

- प्रत्येक गुणसूत्र का सेन्ट्रोमियर दो भागों में बँट जाता है।
- गुणसूत्रों के दोनों क्रोमेटिड अलग होकर दो गुणसूत्र बन जाते हैं।
- तर्कु तंतु गुणसूत्रों को विपरीत ध्रुवों की ओर खिंचता है।
- इस अवस्था के अंत तक कोशिका अपने मध्य भाग में संकुचित होने लगती हैं।

**घ ) अन्त्यावस्था** (Telophase)

- संतति गुणसूत्र अपने-अपने ध्रुवों पर चले जाते हैं।
- क्रोमेटिन जाल, केन्द्रिकीय झिल्ली एवं एक केन्द्रिका पुनः बन जाते हैं।
- जन्तु कोशिका में सेन्ट्रोसोम विभाजित होकर दो सेन्ट्रियोल बना लेते हैं।
- दोनों ध्रुवों पर दो केन्द्रक बन जाते हैं।
- तर्कु तंतु विलुप्त हो जाती है।
- प्रत्येक केन्द्रक में गुणसूत्रों की संख्या, मातृ कोशिका के बराबर होती है।

**ii) कोष्ठिका द्रव्य विभाजन (Cytokinesis) ( द्वितीय चरण )**

मध्य रेखिय संकुचन से कोशिकाद्रव्य विभाजित हो जाता है, जिसे Cytokinesis कहते हैं। इसके फलस्वरूप एक मातृकोशिका से दो विकसित कोशिकाएं बन जाती हैं। यह क्रिया पौधे एवं जन्तुओं में अलग-अलग विधियों द्वारा संपन्न होती हैं।

## समसूत्री विभाजन का महत्व

- यह कायिक कोशिकाओं मे होता है, जिसके कारण जीवो में वृद्धि एवं विकास होता है।
- संतति कोशिका (Daughter cell) मातृ कोशिका के समान होती है।
- कुछ सूक्ष्मजीव, जैसे- कवक, शैवाल, प्रोटोजोआ आदि इसके द्वारा अलैंगिक प्रजनन (Asexual Reproduction) करते हैं।
- इस विभाजन द्वारा शरीर की मरम्मत होती है एवं घाव भरते हैं।

## अर्द्धसूत्री कोष्ठिका विभाजन (Meiosis)

- इस विभाजन में एक मातृ कोशिका विभाजित होकर चार संतति कोशिकायें बनाती है, जिसमें गुणसूत्रों की संख्या मातृ कोशिका की आधी रह जाती है, इसलिए इसे अर्द्धसूत्री या न्यूनकारी विभाजन (Reduction cell devision) कहते हैं।
- इसकी खोज 1887 मे सर्वप्रथम **वीजमैन** (Weismann) ने की, परन्तु इसका विस्तृत अध्ययन **स्ट्रॉसबर्गर** ने 1888 मे किया।
- यह विभाजन जनन कोशिकाओं (Reproductive cell) में

होता है जिससे जन्तुओं में शुक्राणु (Sperm) और अण्डाणु (Ovum) तथा पौधों में नर तथा मादा युग्मक (Male and female gametes) बनते हैं।

**चरण**

- अर्द्धसूत्री विभाजन दो चरणों में होता है-

**अ)** मियोसिस प्रथम (Meiosis I)- गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है।

**ब)** मियोसिस द्वितीय (Meiosis II)- दूसरे चरण का विभाजन समसूत्री विभाजन के समान होता है।

- प्रथम अर्द्धसूत्री विभाजन में चार अवस्थाएँ होती है:

**i) पूर्वावस्था-I (Prophase-I)**

**क ) तनुपट्ट अवस्था** (Leptotene Stage)

केन्द्रक का आकार बढ़ जाता है तथा क्रोमेटिन जाल संघनित होकर गुणसूत्रों में बदल जाता है।

**ख ) युग्मपट्ट अवस्था** (Zygotene)

इसमें समजात गुणसूत्रों के जोड़े बनते हैं। इस क्रिया को अंतर्ग्रथन (Synapsis) कहते हैं। इसके बाद बने गुणसूत्र, युग्मित गुणसूत्र (Divalents) कहे जाते हैं।

**ग ) स्थूलपट्ट अवस्था** (Pachytene Stage)

समजात गुणसूत्रों के क्रोमेटिड स्पष्ट हो जाते हैं और एक ही जगह पर चार-चार अर्द्धगुणसूत्र (Chromatids) दिखाई देने लगते हैं, जिसे चर्तुसयोंजक दशा (Tetrad) कहते हैं।

**घ ) द्विपट अवस्था** (Diplotene Stage)

समजात गुणसूत्रों में विकर्षण पैदा होने लगता है, गुणसूत्र अलग–अलग होकर भी ''किएज्मा'' नामक बिन्दु से एक दूसरे से जुड़े होते हैं। इस अवस्था में गुणसूत्रों में एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया होती है जिसे 'क्रासिंग ओवर' (Crossing Over) कहते हैं, इससे जीवों में विभिन्नता आती है। इस अवस्था के अंत में गुणसूत्र दोनों सिरों की ओर चले जाते हैं जिसे Terminalization कहते हैं।

**ड. ) पारगति क्रम अवस्था** (Diakinesis)

केन्द्रिका और केन्द्रक कला समाप्त हो जाती है। तर्कु तन्तु बनना प्रारम्भ हो जाते हैं।

**ii) मध्यावस्था प्रथम (Metaphase-I)**

तर्कु उपकरण पूरी तरह से बन जाता है तथा गुणसूत्र, तर्कु की मध्यरेखा पर व्यवस्थित हो जाते हैं एवं केन्द्रिका एवं केन्द्रीय भित्ति समाप्त हो जाती है।

**iii) पश्चावस्था प्रथम (Anaphase-I)**

समजात गुणसूत्रों के दोनों गुणसूत्र विपरीत ध्रुवों पर जाते हैं। मातृक एवं पैतृक सैन्ट्रोमियर पृथक हो जाते हैं। केन्द्रक के आधे-आधे गुणसूत्र दोनों ध्रुवों पर चले जाते हैं।

**iv) अन्त्यावस्था प्रथम (Telephase-I)**

ध्रुवों पर स्थित गुणसूत्र के चारों ओर केन्द्रकीय झिल्ली पुनः बन जाती है। क्रोमेटिन जाल और केन्द्रिका भी बन जाते हैं। अन्त्यावस्था प्रथम के बाद कोशिका द्रव्य का भी विभाजन होता है तथा दो कोशिकायें बन जाती है। इस प्रकार मियोसिस–I के पश्चात एक मातृ कोशिका से दो संतति कोशिकाएं बनती हैं, जिनमें गुणसूत्र की संख्या मातृ कोशिका की आधी होती है।

- द्वितीय अर्द्धसूत्री विभाजन या Meiosis II– यह बिल्कुल समसूत्री विभाजन की तरह होती है। इसमें भी चार अवस्थायें होती हैं।

**i) पूर्वावस्था-II (Prophase II)**

इसमें क्रोमेटिन जाल संघनित होकर गुणसूत्रों का रूप धारण कर लेता है। गुणसूत्र मोटे एवं घने हो जाते हैं। इस अवस्था को द्वियक (dyad) कहते हैं। क्योंकि इसमें दो अर्धगुणसूत्र होते हैं।

**ii) मध्यावस्था-II (Metaphase II)**

1. केन्द्रिका एवं केन्द्रकीय झिल्ली विलुप्त।

2. द्वियक गुणसूत्र तर्कु के मध्य रेखा पर स्थित।

**iii) पश्चावस्था-II (Anaphase II)**

गुणसूत्र के सेन्ट्रोमियर विभाजित हो जाते हैं, एक गुणसूत्र के दो अर्द्धगुणसूत्र अलग होकर दो गुणसूत्र बना लेते हैं और नए गुणसूत्र तर्कु तन्तुओं की सहायता से विपरीत ध्रुवों पर चले जाते हैं।

**iv) अन्त्यावस्था-II (Telephase II)**

ध्रुवों पर स्थित गुणसूत्रों के चारों ओर केन्द्रिकीय झिल्ली बन जाती है। केन्द्रिका पुनः बन जाती है, इस प्रकार एक अगुणित केन्द्रक से दो अगुणित केन्द्रक

(कुल चार) बन जाते हैं।

- इसके बाद कोशिका द्रव्य का विभाजन होता है।

  इस प्रकार अर्द्ध–सूत्री विभाजन के पश्चात एक द्विगुणित कोशिका (2n) से चार अगुणित कोशिका (n) बनती है।

- उदाहरण मानव की कोशिका में 46 गुणसूत्र पाए जाते हैं जो द्विगुणित कोशिका होती है जबकि जनन कोशिकाएँ जो अर्द्धसूत्री विभाजन से प्राप्त होती है, उसमें 23 गुणसूत्र पाए जाते हैं जो अगुणित कोशिका होती है।

## अर्द्धसूत्री विभाजन का महत्व

i) इस विभाजन के कारण ही पीढ़ी–दर–पीढ़ी जीवों की कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या समान बनी रहती है।

ii) इस विभाजन के द्वारा जीवों में नए गुण पैदा होने की संभावना होती है।

iii) यह विभाजन जंतु और पादप में जनन कोशिका बनाता है।

iv) यह विभाजन **जैव विकास** में सहायता करता है।

## असूत्री विभाजन (Amitosis)

- यह विभाजन कम विकसित एक कोशिकीय जीवों मे पाया जाता है जैसे– प्रोटोजोआ, कवक, शैवाल। इस विभाजन में पहले **केन्द्रक विभाजित** होता है, फिर **कोशिका द्रव्य**, अंत में दो कोशिकाएं बन जाती हैं।

Gupta Classes

# 3. ऊतक संगठन

- एक कोशिकीय जीवों में सभी जैविक प्रखियाएँ एक कोशिका द्वारा ही की जाती हैं, जबकि बहुकोशिकीय जी अलग-अलग कोशिकाओं के समह (खतक व भिन्न-भिन्न कार्य करते है
- कोशिकाओं के ऐसे समूह को जिनकी उत्पखिा. रचना व कार्य समान हों खतक कहते हैं
- खतकों के अखययन को औतिकी (Histology) कहते हैं।

## पादप खतक

### (PLANT TISSUE)

- पौखो का शरीर विभिन्न प्रकार के खतकों से बना है। खतकों को मख्यत: दो भागों में विभाजित किया जाता है

अ) विभाज्योतक (Meristematic Tissue)

ब) स्थायी खतक (Permanent Tissue)

### अ) विभाज्योतक (Meristematic Tissue)

- यह मोटाई में वद्धि करने वाले भाग जैसे प्ररोहाग्र (Shoot tip), मूलाग्र (Root tip) तथा कैंबियम (एखाा) में मिलता है। ये कोशिकाएं निरंतर विभक्त होती रहती हैं. और पौखाों की लम्बाई और मोटाई को बढातीं हैं

**लक्षण** (Character)

1. इनकी कोशिकाएं समान संरचना वाली हैं एवं कोा भिखिा (Cell wall) पतली होती है।
2. कोशिकाओं का आकार गोल. अंडाकार होता है
3. इनके बीच अंत:कोशिकीय (Inter cellular space) स्था नहीं होते।
4. इनमें पर्याप्त कोशिका द्रव्य (Cytoplasm) और बडा केन्द्रक होता है।
5. इनमें कोई भी रिक्तिक (Vacuoles) नहीं होती हैं

- विभाज्योतक का मुख्य कार्य कोशिका विभाजन द्वारा निरं नई कोशिकाओं का निर्माण करना है
- यह 3 प्रकार के होते है- शीर्षस्थ. अन्तर्विष्ट तथा पार्श्ववि विभाज्योतक
- यह मलाग्र. प्ररोहाग्र. पखिायों के आधार पर पर्वसंधि के खपर तथा नीचे, तथा द्विबीजपत्रीय पौधों में मल एवं तने के पार्श्व में मिलते हैं।

### ब) स्थायी खतक (Permanent Tissue)

- स्थायी खतक, विभाज्योतक से बनते हैं। इनका निश्चित होता है।
- कोशिकाएं जीवित या मत. पतली या मोटी भिखिा की होती हैं।
- कोशिकाएं बड़ी एवं रसखाानी यक्त साइटोप्लाज्म (Vacuolated Cytoplasm) वाली होतीं हैं।

## सरल खतक (Simple Tissue)

- सरल खतक केवल एक प्रकार की कोशिकाओं के समह हैं।
- पादपकाय में पाए जाने वाले सरल खतक निम्न हैं

1. मदतक (Parenchyma)
2. स्थलकोण खतक (Collenchyma)
3. दढोतक (Sclerenchyma)

### 1. मदतक (Parenchyma)

- यह पौखो के जड़, तना, पखिायों, खल-खूल आदि में प्रमखता से पाया जाता है। इसका आकार प्राय: समान होता है
- इसकी भिखिा (Cell wall) पतली होती है तथा सैल्यलोस की बनी होती है।
- कोशिकाएं प्राय: जीवित होती हैं एवं इनमें सघन कोशिक द्रव्य (Dense Cytoplasm) होता है।
- कोशिका के मखय में एक वहत रसखाानी (Large Vecuole) होती है।

**मदतक के कार्य** (Function of Parenchyma)

1. भोजन का संचय एवं स्वांगीकरण
2. दढता प्रदान करन
3. रेजिन को संचित करन
4. मृदुतक (Parenchyma) में जब क्लोरोखिल उपस्थित होता है तो उसे क्लोरेंकाइमा (Chlorenchyma) कहते हैं और कोशिकाएं भोजन बनाती हैं

## 2. स्थलकोण खतक (Collenchyma)

- पौखो के प्रत्येक भाग में सबसे बाहरी कवच एपीडा (Epidermis) होती है। एपीडर्मिस के ठीक नीचे कोलेनकाइमा होता है।
- यह जीवित कोशिका का बना होता है
- कोशिका भिखिा पतली होती है परन्त कोशिका के कोणों पर यह मोटी होती है।
- अंत:कोशिकीय स्थान (Inter Cellular Space) नहीं होते हैं।
- कोशिकाओं का आकार गोल. अंडाकार एवं बहपष्ठीय होता है।
- इसमें प्राय: क्लोरोप्लास्ट होते है

**कार्य**

1. पौखो में लचीलापन और दढता प्रदान करता है
2. जब कोलेनकाइमा में हरे वर्णक (क्लोरोप्लास्ट) होते हैं, तब यह शर्करा और मंड (Sugar and Starch) का निर्माण करते हैं।

## 3. दढोतक (Sclerenchyma)

- स्कलेरेंकाइमा खतक की कोशिकाएं प्राय: लम्बी. प लिग्निननयक्त होती है
- अंत:कोशिकीय स्थान नहीं - आपस में सटे होने के कारण।
- ये कोशिकाएं प्राय: दोनों सिरों पर नकीली होती है
- कोशिका भिखिा के अत्यखिाक मोटे होने के कारण कोशिका नगण्य हो जाती है।
- दो निकटवर्ती कोशिकाओं के बीच सस्पष्ट मखय पटलिव (Middle lamella) होती है।
- स्क्लेरेंकाइमा कोशिकाएं पौखाों में अखिाकता में पाए जाते हैं।
- इसका मख्य कार्य पौखाों में **दढता** (Rigidity) पैदा करना है।
- कोशिका भिखिा में तिरछे क्षेत्र होते हैं. जिन्हे **गर्त** कहते हैं।
- जीव द्रव्य की अनपस्थिति से कोशिका मत हो जाती है
- कार्टेक्स, पिथ, कठोर बीजों आदि में **स्कलेरीड** (Scalerid) नामक विशेष कोशिका की परत पाई जाती है. जो अखिाक दढता प्रदान करती है
- इन कोशिकाओं का कोई निश्चित आकार नहीं होता है. र मत होती हैं
- स्केलेरेंकाइमा (दढोतक) खतक. पादप के बाख भागो रक्षी खतकों में रूपान्तरित हो जाते हैं

## रक्षी खतक (Protective Tissue)

- ये खतक पौखाों के बाख परत पर स्थित होते हैं
- यह मोम जैसे पदार्थ **क्यटिन** (Cutin) से ढकी होती है।
- ये खतक पौखो के भीतरी खतकों की रक्षा करते हैं
- जैसे-जैसे जड़ और तने की आयु बढ़ती जाती है, परिखिा पर स्थित एपीडर्मिस के अंदर की कोशिकाएं कॉर्क कोशिकाओं में रूपांतरित हो जाती है
- इनकी कोशिका भिखिा **सुबेरिन** नामक पदार्थ के जमा होने से बहत मोटी हो जाती है।
- जाइलम और खलोएम को संवहनीय खतक भी कहते हैं और ये मिलकर **संवहन बंडल** (Vascular bundle) बनाते हैं

## कॉर्क के कार्य (Function of Cork)

1. कॉर्क अंदर की कोशिकाओं की रक्षा करती है
2. यह बहुत हल्की एवं अत्यखिाक संपीडयनी (Compressive) होती है। इसमें आसानी से आग नहीं लगती।
3. इसका उपयोग रोखान (Insulation), घातरोखान (Shock absorber). एवं खेल के सामान बनाने में किया जाता है

- रक्षी खतक की कोशिकाएं रक्षा कार्य के लिए विशेष स्वरूपों में परिवर्तित हो जाती है, जैसे प्याज की झिल्ल कोशिकाओं की भिखियाँ लिगनिन सुबेरिन जैसे कुछ कार्बनिक पदार्थों के जमा होने से मोटी और जलरोखाी हो जाती हैं
- पौखाों में बाख त्वचा या एपिडर्मिस कोशिकाओं कें बीच-बीच में छोटे रन्ख (Pores) होते हैं. जिन्हें जलरंख (Stomata) कहते हैं।
- Stomata के द्वारा पौखो गैसों का आदान-प्रदान एवं **वाष्पोत्सर्जन** करते हैं।

## जटिल खतक (Complex Tissues)

- जटिल खतक, एक से अखिाक प्रकार की कोशिकाओं मिलकर बने होते हैं और ये सभी एक साथ मिलकर एक इकाई की तरह कार्य करते हैं।
- जटिल खतक जल, खनिज, लवण तथा पौखाों द्वारा बनाए गए भोजन को पौखो के अन्य भागों तक पहँचाता है
- जटिल खतक दो प्रकार के होते हैं-

1. जाइलम (Xylem)

2. खलोएम (Phloem or bast)

### जाइलम (Xylem)

- यह चार प्रकार की कोशिकाओं टैञ्कीड्स, वैसल्र वाहिका, जाइलम पेरेंकाइमा तथा जाइलम स्केलेरेंकाइमा से मिलकर बना होता है
- इसमें **वाहिका** (Vessels) सबसे महत्वपर्ण होती है।
- ये पानी तथा खनिज लवणों को जड़ से पौखों के अन्य भाग तक पहुँचाता है। जाइलम पौखो को दढता प्रदान करता है

### खलोएम (Phloem)

- यह जीवित संवहन खतक है।
- यह चालनी नलि (Sieve tubes), सह-कोशि (Companion cells), खलोएम पैरेंकाइमा तथा खलोएम रेश (Bast Fibres) से मिलकर बनते हैं
- इसमें सबसे बडी चालनी नलिका (Sieve tubes) है।
- इसमें छिद्रित भिखिा होती है जो पखिायों से भोजन को पौखो के विभिन्न भागों तक पहुँचाती है

## जंत खतक (Animal Tissues)

- मनुष्य सहित सभी उच्च कशेरूकी जन्तओं में चार प्रकार के खतक पाए जाते हैं

1. उपकला खतक (Epithelial Tissue)
2. संयोजी खतक (Connective Tissue)
3. पेशीय खतक (Muscular Tissue)
4. तंत्रिका खतक (Nervous Tissue)

## 1. उपकला खतक (Epithelial Tissue)

- यह एक रक्षी अस्तर खतक है जो त्वचा, मुँह, आहारना तथा खेखड़ों की सतह पर एपिथीलियमी खतक से बनी होती है। इस खतक की कोशिकओं के आकार और रचना भिन्नता होती है। इनकी उत्पखिा एक्टोडर्म, मीजोडर्म एवं एण्डोडर्म आदि परतों से होती है। इनमें रूखिार कोशिकाओं का अभाव होता है।

### कार्य

1. ये कोशिकाएं त्वचा की बाख परत बनाती हैं एवं अंदर की कोशिकाओं की रक्षा करती हैं
2. जल तथा अन्य पोषक पदार्थों के अवशोषण में सहायक होती हैं।
3. व्यर्थ पदार्थों के उत्सर्जन में सहायक होती है
4. खावण में सहायक।
5. कई नालवत् अंगों में ये श्लेष्म या अन्य तरल पदार्थों संवहन में सहायता करती है।

## 2. संयोजी ऊतक

संयोजी ऊतक एक अंग को दूसरे अंग से अथवा ऊतक को दसरे ऊतक से जोडता है

### संयोजी ऊतक की विशेषताएं –

- ये शरीर में सबसे अधिक फैले होते हैं तथा शरीर लगभग 30% भाग इन्हीं का बना होता है। ये प्रत्येक अंग में भीतर तथा बाहर. और विभिन्न अंगों के बीच-बीच में पाए जाते हैं।
- इनकी कोशिकाएं एक आधारभूत पदार्थ, मैटिञ्क्स (Matrix), में धंसी होती हैं। इसीलिए कोशिकाएं काफी दर-दर होत हैं।
- मैटिञ्क्स में दो प्रमख घटक होते हैं (i) तन्तु, (ii) एक **आखाार पदार्थ।**
- कोशिकाएं कई प्रकार की हो सकती हैं। इनमें से भ्रमणशील होती हैं तथा कछ निश्चित स्थनों पर स्थानबद्ध
- तन्तु भी तीन प्रकार के होते हैं- कोलेजनी. रेटीकली त इलास्टिक
- तन्तुओं सहित समस्त अन्तरकोशिकीय पदार्थ का स्र मलत: ऊतक की कोशिकाएं करती हैं
- संयोजी ऊतक की तीन प्रमख श्रेणियां होती हैं-

  i) साधारण संयोजी ऊतक

  ii) तन्तमय संयोजी ऊतक

  iii) कंकाल संयोजी ऊतक

### साधारण संयोजी ऊतक

i. **अन्तरालित ऊतक** मैटिञ्क्स अर्ध तरल जेली के समान गाढ़ा, मात्रा में अधिक, पारदर्शक, चिपचिपा त्वचा के नीचे, पेशियों के बीच व रक्त वाहिनियों. तन्त्रिकाओं के चा उपस्थित

ii. **वसा ऊतक** स्तनधारी की त्वचा के नीचे उपस्थित, अन्तरालित ऊतक जैसी; परन्तु फाइब्रोब्लास्ट कोशिकाओं में वसा बिन्द एकत्र होकर जडने से एक बडा वसा कोश बन जाता

कार्य: वसा संचित करके भोजन का संग्रह. आघात सहना व ताप नियन्त्रण

iii. **वर्णक ऊतक** : इनमें वर्णक कोशिकाएं पाई जाती जिनमें रंजक कण होते हैं। ये त्वचा की डर्मिस. नेत्रों के रक्त पटल व आइरिस पर स्थित होती हैं

**तन्तुमय संयोजी ऊतक** में मैटिञ्क्स की मात्रा कम व रेशेदार तन्तओं की संख्या अधिक होती है। ये दो प्रकार के होते हैं–

i **श्वेत रेशेदार** : रेशे आपस में जुड़े, लोचरहित, व मजबूत, मैटिञ्क्स में फाइब्रोब्लास्ट की कोशिकाएं होती हैं यही दढता प्रदान करती हैं: शक्ति व दाब को सहन करत है।

ii **पीत रेशेदार** : पीले शाखित लचीले तन्तु; लचीला **ऊतक**– ऐसे स्थानों पर पाया जाता है जहां लोच की जरूरत होती है. जैसे गर्दन. उंगलियों के पोर

**कंकाल संयोजी ऊतक** कंकाल का निर्माण करता मैटिञ्क्स तथा कोशिकाएं व कभी–कभी रेशे भी पाए जाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं -

i **उपास्थि** (Cartilage) : मैटिञ्क्स अर्ध ठोस, कॉण्डिञ्न नामक प्रोटीन का बना, महीन, पतले कोलेजन तन्तुओं के क कुछ कड़ापन, मैटिञ्क्स में रिक्तिकाएं जिनमें **कॉण्डिञ्योब्लास्ट कोशिकाएं** होती हैं। नाक की Tips और बाख कान उपास्थि का बना होता है। यह खतक हमारे शरीर में कम होता शार्क मछली का परा अन्त:कंकाल उपास्थि का ही होता है।

ii **अस्थि** (Bone) दृढ़; मैटिञ्क्स ओसीन नामक प्रोटीन का बना होता है। अस्थि के मैटिञ्क्स में प्रचुर मात्रा में कैल्शियम व अन्य अकार्बनिक लवण होते है। जो दढता प्रदान करते ह

**संयोजी ऊतक के प्रमख कार्य इस प्रकार है:–**

- ये ऊतक विभिख ऊतकों को परस्पर जोडते एवं सहारा देते हैं।
- आंतरांगों एवं ऊतकों को आवश्यक लोच, चिकनाहट दृढता प्रदान करते हैं और धक्कों को सहने की क्षमता दे हैं।
- घायल और संखमित स्थानों की सफाई व मरम्मत क क्षतिपर्ति करते हैं
- विषैले पदार्थों, रोगाणुओं व कीटाणओं को नष्ट करके शरी को सरक्षा प्रदान करते है
- हडिडयों और उपास्थि के रूप में शरीर का ढांचा बनाते हैं।
- हड्डियों और पेशियों को जोडकर गति एवं गमन में सहायता करते हैं।
- रुधिर के रूप में शरीर के विभिन्न भागों में विभिख पदार्थ को लाते व ले जाते है

## रुखिार (Blood)

- रुखिार एक तरल संयोजी खतक है जो परिसंचरण तंत्र भ्रमण करता है। यह 60% प्लाज्मा (मेटिञ्क्स) और 40% रुखिार कणिकाओं का बना होता है।
- स्वस्थ व्यक्ति के शरीर का लगभग 7% भाग रूखिार का ही बना होता है
- रूखिार कणिकाएँ निम्न प्रकार की होती है :–
  - लाल रूखिार कणिकाएँ (RBC)
  - श्वेत रूखिार कणिकाएँ (WBC)
  - प्लेटलेटस या थ्राम्बोसाइटस
- रक्त की उत्पखिा भ्रूण के मीसोडर्म से होती है। इसका मेटिञ्क्स हल्के पीले रंग का होता है। स्वस्थ मनष्य में यह 5 से लीटर तक पाया जाता है
- यह शरीर के भार का 7 प्रतिशत होता है
- यह सरल संयोजी खतक है।
- यह हल्का क्षारीय (pH=7.4) होता है।
- रक्त में दो प्रकार के पदार्थ पाए जाते ह
  1. प्लाज्मा (Plasma) (मेटिञ्क्स)
  2. रूखिाराण (Blood Corpuscles)

## 1. प्लाज्मा (Plasma)

- रुखिार का 60 प्रतिशत होता है, इसमें 90 प्रतिशत जल होता है व 10 प्रतिशत कार्बनिक व अकार्बनिक पदार्थ होते हैं एवं रुखिार में प्रोटीन, पचे हुए पोषक पदार्थ. हार्मोन्स. उत्सर्जी पदा एन्जाइम आदि भी पाए जाते हैं।

## 2. रुखिाराण (Blood Corpuscles)

- रुखिार का 40 प्रतिशत।
- इसके तीन भाग होते हैं –

**i) लाल रक्त कोशिकाएं**

(Red Blood Carpuscles or Erthrocytes)

- ये केवल कशेरूकी प्राणियों में पाए जाते हैं, इ हीमोग्लोबिन (Hb) नामक प्रोटीन पायी जाती है जिसमें लोहा (Fe) पाया जाता है। हीमोग्लोबिन ऑक्सीजन को शोषित कर **ऑक्सी-हीमोग्लोबिन** ($HbO_2$) नामक अस्थायी यौगिक बनाता है, जो विखंडित होकर ऑक्सीजन को मुक्त कर देता यही $O_2$ शरीर के विभिन्न हिस्सों में पहुँचती है और $CO_2$ को हीमोग्लोबिन वापस कार्बोक्सी-हीमोग्लोबिन के रूप में फेफड़ें (Lungs) तक लाता है
- स्तनधारियों के RBC के जीवद्रव्य में केन्द्रक (Nucleus) का पूर्ण अभाव होता है। स्तनधारियों में सिर्फ ऊँट के RBC में केन्द्रक पाया जाता है

**ii) श्वेत रूधिराणु** (White Blood Carpuscles)

- इसे ल्यकोसाइट (Leucocyte) भी कहते हैं।
- मनुष्य के शरीर में इसकी संख्या 5 से 9 हजार प्रतिघन मि. ली. तक होती है।
- इसमें 3 प्रतिशत इओसिनोफिल्स होता है
- WBC का मुख्य कार्य प्रतिरक्षा. एलर्जी तथा संवेदनशीलता है।
- **WBC में अन्य पदार्थ**- .5% बेसोफिल्स, 77% न्युटोफिल्स. 18% लिम्फोसाइट, (1-3%) मोनासाइट. लिम्फोसाइट WBC का 18 से 20% तक होता है
- **मोनासाइटस** (Monocytes)- मानव शरीर में जिन स्थानों से कोई जीवाणु या रोगाणु शरीर में प्रवेश करता है. वहाँ पर ये समूह में एकत्रित होकर अपने कूटपादों (Pseudopodia) द्वारा पकड लेते हैं एवं उसे नष्ट कर देते हैं
- WBC. शरीर को रोगी होने से बचाता है
- ये रूधिर के कुछ विशेष प्रोटीन को प्रतिरक्षियों (Antibodies) में परिवर्तित कर देते हैं

**iii) रुधिर प्लेटलेटस या थ्राम्बोसाइटस**

(Blood Plateletes or Thromobocytes)

- यह केवल **स्तनधारी वर्ग** के रक्त में पायी जाती है।
- इसका मुख्य कार्य शरीर के कट या चोट लग जाने पर रक्त के बहाव को रोकना। यह रक्त का थक्का बनाने में म करती है।
- रक्त में फाइब्रिनोजेन एवं प्रोथ्रोम्बिन नामक दो प्रोटीन प जाते हैं, जिसका निर्माण यकृत में होता है. यह रक्त थक्का जमने में सहायक होता है
- एन्टी-प्रोथ्रोम्बिन या हिपैरिन, प्रोथ्रोम्बिन को निष्क्रिय बना रखता है। यही कारण है कि रक्त वाहिनी नलिकाओं में रक्त नहीं जमता है।

## रुधिर वर्ग (Blood Group)

- सर्वप्रथम **लैण्ड स्टीनर** ने 1909 में रुधिर वर्ग की जानकारी दी। इन्होंने रूधिर को इसके एण्टीजन - एण्टीबॉडी प्रतिक्रिया के आधार पर चार समहों में विभक्त किया।

1. ग्रप A  2. ग्रप B
3. ग्रप AB  4. ग्रप O

1. **Blood Group A**- खोज- **कार्ल लैण्ड स्टीनर**
   इसमें Antibody-b तथा Antigen A होता है
2. **Blood Group B**- खोज- **कार्ल लैण्ड स्टीनर**
   इसमें Antibody-a तथा Antigen B होता है।
3. **Blood ग्रप AB**- इसमें Antibody अनपस्थित तथा Antigen A तथा Antigen B होता है। इस Group का व्यक्ति किसी भी Group का रूधिर ले सकता है इसलिए इसे **'सर्वग्राही ब्लड ग्रप'** (Universal Blood Receipient) कहा जाता है।
4. **Blood Group O**- खोज- **डी कास्टेलो** एवं **स्टली**
   इसमें Antibody A तथा Antibody B उपस्थित तथा Antigen अनुपस्थित होता है इस ग्रुप का व्यक्ति किसी को भी Blood दे सकता है।, इसलिये इसे **सर्वदाता ग्रप** (Universal Blood Donor) भी कहा जाता है

| ख. | रक्त वर्ग | एन्टीजन ( RBC में ) | एन्टीबाडी प्लाज्मा |
|---|---|---|---|
| 1. | A | A | b |
| 2. | B | B | a |
| 3. | AB | A एवं | कोई एन्टीबॉडी नहीं |
| 4. | O | कोई एन्टीजन नहीं | a एवं b |

- रक्त में प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है. जबकि लसिका में कम होती है।

Gupta Classes

## आर.एच. कारक

### (Rh Factor)

- सन् 1940 में **कार्ल लैण्डस्टीनर** तथा **ए. एल. वीनर** ने रक्त में एक अन्य प्रकार के एन्टीजन का पता लगाया। चूँकि इस एन्टीजन का पता सबसे पहले रीसस बन्दरों में लगा था, इसलिए इसे **'Rh'** नाम दिया गया। जिस व्यक्ति के रक्त में यह एण्टीजन उपस्थित होता है, उसे Rh(+Ve) तथा जिसमे यह एण्टीजन अनुपस्थित होता है. उसे Rh(-Ve) कहते हैं।
- यदि Rh(-Ve) व्यक्ति को Rh(+Ve) रक्त वर्ग के व्यक्ति का रक्त दिया जाए तो Rh(-Ve) वाले व्यक्ति की मृत्यु की संभावना भी हो सकती है, क्योंकि Rh+ रक्त पहुँचने पर, Rh(-) व्यक्ति के शरीर में एन्टीबॉडी बनना प्रारम्भ हो जायेगा. इसलिए रक्त के आदान-प्रदान में Rh factor की भी जाँच की जाती है।
- पूरे विश्व में सर्वाधिक लोग **ओ+''** रक्त वर्ग के हैं जबकि भारत में लगभग 97 प्रतिशत लोग Rh(+Ve) रक्त वर्ग के हैं।
- यदि पिता का रक्त Rh(+Ve) हो तथा माता का रक्त Rh(-Ve) हो तो जन्म लेने वाले शिशु की मृत्यु गर्भावस्था में ही अथवा जन्म के तुरन्त बाद हो जाती है। इस रोग को एरिथ्रोब्लास्टोसिस फटेलिस (Erthroblastosis fetalis) कहते हैं।
- रक्त परिसंचरण की खोज **विलियम हार्वे** ने की थी

## रक्त की कार्य प्रणाली

1. $O_2$ का परिवहन
2. $CO_2$ का परिवहन
3. हार्मोन्स का परिवहन
4. तापखम का नियंत्रण
5. रोगों से प्रतिरक्षा करना
6. रक्त का थक्का न बनने देना

## 3. पेशीय खतक (Muscle Tissue)

- पेशी कोशिकाओं में उपस्थित संकुचनशील प्रोटीन में संकचन एवं प्रसार होने से अंगों में गति होती है।
- पेशीय खतक तीन प्रकार के होते हैं-

i) **रेखित पेशी** (Striated muscle or Striped muscular tissue कंकाल पेशी या ऐच्छिक पेशी)

ii) **अरेखित पेशी** (Unstriated muscle or Unstriped muscular tissue चिकनी पेशी या अनैच्छिक पेशी)

iii) **खदयक पेशी** (Cardiac muscle)

### 1. रेखित पेशी या कंकाल पेशी

- कंकाल पेशी, हड्डियों के साथ जुड़ी होती है और शरीर को गति प्रदान करने में सहायक होती है
- ये पेशियाँ हमारी इच्छानसार कार्य करती हैं इसलिए ऐच्छिक पेशी (Voluntary muscles) भी कहते हैं। हम शरीर का 40% भाग इसी पेशी का बना है

**लक्षण** (Character)

1. इसकी कोशिकाएं लंबी और बेलनाकार होती है और अशाखित (Unbranched) होती है।
2. इन पर हल्के एवं गहरे रंग के बैण्ड पाये जाते हैं खमानुसार (एकान्तर खम में) उपस्थित होते हैं इसलिए उन्हें **रेखित पेशी** कहते हैं।
3. बहुत सारे केन्द्रक जो पेशी के बाहरी ओर स्थित होते है

### 2. अरेखित पेशी या चिकनी पेशी

- हमारे शरीर के अंदर आमाशय, आंत, मूत्राशय वाहिनी श्वासनली आदि अंगो की भिखिा में होती है। ये पेशि कभी भी अस्थियों से जुड़ी नहीं होती इसलिए इसे अकंकाली पेशी भी कहते हैं

**लक्षण** (Character)

1. कोशिकाएं लंबी एवं दोनों सिरों पर पतली
2. कोशिका के अंदर मखय भाग में स्थित केवल एक केन्द्र होता है। इसके चारों ओर अल्प सारको-प्लाज्म पाया जाता है
3. पेशी के आर-पार कोई पटटी या बैण्ड नहीं होती. अत: इन्हें **अरेखित पेशी** कहते हैं।

### 3. खदयक पेशी

- यह पेशी केवल खदय की दीवार में होती है। इन्ही के संकुचन तथा शिथिलन से खदय गति करता है। संरचना की दृष्टि से ये रेखित पेशियों से व कार्य में अरेखित पेशियों से मिलती है। लगातार कार्यशील होने के कारण ये ATP की काक्की खर्जा खर्च करती है।

**लक्षण** (Character)

1. पेशी के आर-पार बैण्ड हल्के होते हैं
2. प्रत्येक कोशिका के मखय प्राय: एक तथा कभी-कभी केन्द्रक होते हैं

3. बेलनाकार तथा शाखित
4. यह खदय में लयबद्ध संकुचन एवं प्रसार कराती है. इसी से शरीर में रक्त का परिवहन होता है

## 4. तंत्रिका खतक (Nervous Tissue)

- मस्तिष्क, मेरूरज्ज (Spinal Cord) तंत्रिकाएँ. तंत्रिका खतव से बनी होती है
- तंत्रिका खतक की कोशिकाओं को न्यरॉन कहते हैं संदेशवाहक का कार्य करती हैं

### न्यरॉन के प्रमख भाग हैं

**(Main Part of Neuron or Nerve Cell)**

1. कोशिका काय (Cell Body or Cyton) जिसमें एक केन्द्रक तथा कोशिका द्रव्य होता है. इसमें निसिल्स कण (Nissils Granules) रहते हैं।
2. कोशिका-काय से न्यरॉन के एक से अखिाक निकले हु , पतले तंतु प्रवर्खा (Process) डेंडञइटस कहलाते हैं। डेंडञइट तंत्रिका कोशिका के दोनों ओर से निकलते हैं. इनमें निसिल्स कण पाये जाते हैं
3. कोशिका-काय या साइटन से प्रारंभ होकर एक बहुत पतली एवं लम्बी तंत्रिका प्रखिया (Nerve Processess) मिलती है। यह एक न्यूरॉन से दूसरे न्यरॉन तक संदेशवाहक का का करता है जिसे **एक्सॉन** (AXON) कहते हैं।

- एक कोशिका का डेन्डञइट, दूसरी तंत्रिका कोशिका एक्सॉन से विशिष्ट बंखाों द्वारा जडे होते हैं ये बंखा यग्मानबंखा (Synopse) कहलाते हैं।

### तंत्रिका आवेग का संवहन

न्यूरॉन में एक ओर से दूसरी ओर सिनैप्स के खपर से

**न्यरॉन में एक ओर से दूसरी ओर**

- **तंत्रिका**-तंतू में से तंत्रिका-आवेग का संचरण **विद्युत-रसायन** विधि से होता है। यह संचरण उस प्रकार का नहीं होता जैसा कि किसी तार के भीतर से विद्युत-धारा के प्रवाहित होने में इलेक्टञनों का प्रवाह होता है, अपितु यह विखुवीव (depolarisation) की तरंग के रूप मे चलता जाता है
- सामान्य (विश्रामी) अवस्था में तंत्रिका तंतु के बाहर ओर (+) धन चार्ज बना होता है। उस अवस्था को ध्रुवीकत (polarised) कहते हैं। यह ध्रुवीकरण बाहर की ओर $Na^+$ आयनों की अधिक संख्या होने के कारण होता है। अवस्था इसलिए बनी रहती है क्योंकि आयनो को लगात अंदर से बाहर की ओर को धकेला जाता रहता अर्थात पं किया जाता रहता है (सक्रिय अभिगमन. active transport)
- उखोजित होने पर (यांत्रिक, विद्युतीय, रासायनिक अश खष्मा आदि के उखीपन के द्वारा) उस स्थल पर ऐक्सॉन-झिल्ली $Na^+$ आयनों के लिए अधिक पारगम्य हो जाती है और न आयन भीतर को आने लगते है जिससे वहाँ ध्रुवी समाप्त हो जाता है (विद्युवीकरण, depolarisation ) इसके फलस्वरूप स्थानिक तौर पर झिल्ली के भीतर की दिशा खान (पॉज़िटिव) हो जाती है तथा बाहर की दिशा ऋण (नेगेटिव)।
- अब विधुवीकरण का यह बिंदु झिल्ली के सहवर्ती क्षेत्र के लिए स्वयं एक उखीपन बन जाता है और अब यह अगला क्षेत्र ध्रुवीकृत हो जाता है
- इसी बीच पहला क्षेत्र पुनर्ध्रुवीकृत (repolarised) हो जाता है क्योंकि एक ''सोडियम पोटैशियम पंप'' $Na^+$ आयनों क सक्रिय अभिगमन के द्वारा पन: झिल्ली के बाहर की अं पहुँचा देता है
- वह छोटी अवधि (0.001-0.883 सेकंड) जो पनर्ध्रुवीकरण के लिए चाहिए, अनुखोजन अवधि (refractory period) कहलाती है, इस अवधि के दौरान तंत के भीतर कोई अन्य आवेग संचरित नहीं हो सकता

**सिनैप्स के खपर से**

- **सिनैप्स** उस संपर्क बिंदु को कहते हैं जो एक न्यूरॉन ऐक्सॉन की अंत्य शाखाओं एवं दसरे न्यरॉन के डेंडञइटों के बीच बनता है।
- तंत्रिका-तंतु में से गुज़रता हुआ आवेग या तो अपने ल (पेशी) में पहुंचता है जहाँ ऐक्सॉन की अंत्य शाखाएँ पेशं को उखोजित करती हैं जिससे पेशी संकुचित होती है या वह एक अन्य न्यूरॉन के डेंडञइटों के साथ बनने वाला मिल बिंद् है जो. सिनैप्स (synapse) कहलाता है
- सिनैप्स के खपर से आवेग का संचरण एक रासाय प्रखिया होती है। जब कोई आवेग ऐक्सॉन के अंतिम सि पर पहंचता है तब वहां से एक रसायन ऐसीटिल कोल (acetyl choline) (अथवा ऐडञेनलीन, adrenalinel) निकलता है जो आगे अगले न्यूरॉन के डेंडञइटों में उखोजना पैदा करके वहाँ से एक नए आवेग की शरूआत कर देता है। एंज़ाइम **कोलीनेस्टरेज़** (cholinesterase) शीघ्र ही इस रसायन को विघटित कर देता है जिससे सिनैप्स अगले संचरण व लिए पन: तैयार हो जाता है

# 4. जीवधारियों का वर्गीकरण

- जीवधारियों में अप्रत्याशित विविधता होने के कारण जीवों का अलग-अलग अध्ययन कर पाना नितान्त असम्भव है। अतः अपेक्षाकृत समानताओं एवं विषमताओं के आधार पर जीवधारियों को विभिन्न समूहो में विभाजित करने के लिए वर्गीकरण (Classification) किया जाता है।
- जीव विज्ञान की वह शाखा जिसमें जीवधारियों का वर्गीकरण किया जाता है वर्गीकी (Taxonomy) कहलाती है।
- **कैरोलस लिनियस** (Carolus Linnaeus) ने जीवधारियों के वर्गीकरण के लिए **द्विपद नाम पद्धति** दी थी।
- जिसका उल्लेख उन्होंने अपनी किताब Systema Naturae में किया है। इस पद्धति के अनुसार प्रत्येक जीवधारी के नाम मे दो शब्द होते है। पहला वंश का नाम, जिसे **Genus** कहते हैं तथा दूसरा जाति का नाम जिसे **Species** कहते हैं। उदाहरण– आम का वैज्ञानिक नाम है मैंजिफेरा इंडिका (Mangifera Indica) जिसमे Mangifera वंश नाम तथा Indica जाति का नाम है।
- **आर.एन. व्हीटेकर** ने जीवों को पाँच जीव जगतों (Kingdom) में विभाजित किया-
  - i) मोनेरा (Monera)
  - ii) प्रोटिस्टा (Protista)
  - iii) कवक (Fungi)
  - iv) प्लान्टी (Plantae)
  - v) ऐनीमेलिया (Animalia)

**I) मोनेरा (Monera)**

- इस जगत के अन्तर्गत प्रौकैरियोट जीव शामिल है, जैसे जीवाणु, नील-हरित शैवाल (Cyanobacteria), आर्कीबैक्टिरिया, एक्टिनोमाइसिटीज।
- बैक्टिरिया शब्द का प्रयोग एहरेन बर्ग ने किया।
- जीवाणु (Bacteria), एककोशिकीय जीवधारी है।
- आकृति के आधार पर जीवाणु कई प्रकार के होते हैं– छड़ाकार (Bacillus), गोलाकार (Coccus), कोमाकार (Comma),सर्पिलाकार (Spirillum)
- जीवाणुओं में प्रजनन कायिक जनन द्वारा, जैसे- खण्डन (Fission), मुकुलन (Budding), और द्विविखण्डन (Binary fission) आदि द्वारा होता है।
- जीवाणु में अलैंगिक प्रजनन अन्तः बीजाणुओं (Endospores) और कोनिडिया (Conidia) द्वारा होता है।
- **जीवाणु में लैंगिक जनन**- लैंगिक जनन की तीन विधियाँ होती हैं-
- **संयुग्मन** (Conjugation)- इसमें दो कोशिकाओं का मिलन और DNA का स्थान्तरण होता है। इस विधि को **लेडरबर्ग और टेटम** (Lederberg and Tatum) ने खोजा था।
- **जीन पारक्रमण** (Transduction)- इसमें एक विषाणु (Virus) द्वारा एक जीवाणु का DNA दूसरे जीवाणु के DNA से मिल जाता है। इसकी खोज **जिन्डर** तथा **लेडरबर्ग** ने की थी।
- **रूपान्तरण** (Transformation)- जीवाणु बाह्य माध्यम से अवशोषण करता है। इसकी खोज **Griffth** (ग्रिफिथ) ने की थी।

**एक्टिनोमाइसिटीज (Actinomycetes)**

- ये वे जीवाणु हैं जिनकी रचना कवक जाल (mycelium) के समान तन्तुवत व शाखित होती है।
- इनमें स्ट्रेप्टोमाइसिस समूह का वंश भी आता है, जिनसे महत्वपूर्ण प्रतिजैविक, स्ट्रेप्टोमाइसिन प्राप्त होता है।
- इसमें कुछ जीव ऐसे भी हैं जो रोग के कारण हैं, जैसे- तपेदिक (Tubeculosis), डिफ्थीरिया (Diptheria) आदि।

**आर्किबैक्टिरिया (Archaebacteria)**

- ये बैक्टिरिया अत्यधिक ताप व अम्लता की परिस्थितियों में रह सकते हैं। उदाहरण मेथेनोजन (Methanogens), लवणरागी (Halophiles), अधिताप- अम्ल रागी (Thermoacidophites) थर्मोएसिडोफाइट्स।

**नील-हरित शैवाल (Cyanobacteria or Blue Green algae)**

- नील-हरित शैवाल की संरचना जीवाणु से मिलती है तथा ये भी प्रौकैरियोटिक जीव है। ये प्रकाश संश्लेषण में सक्षम होते हैं।
- नील-हरित शैवाल की कुछ कोशिकाओं में हेटेरोसिस्ट

(Heterocyst) पाया जाता है जो नाइट्रोजन स्थिरीकरण का केन्द्र है।

- नील-हरित शैवाल में लैंगिग प्रजनन नहीं होता। इनमे खण्डन, द्विविखण्डन, हॉर्मोगोनिया (Hormogonia) द्वारा प्रजनन होता है।

### प्रोटिस्टा जगत (Protista)

- इनके अन्तर्गत मुख्यतः एककोशिकीय, यूकैरियोटिक आदि **जलीय जीवधारी** आते हैं।
- ये मोनेरा तथा अन्य जीव जगत जैसे कवक, प्लान्टी आदि के बीच की कड़ी माने जाते हैं।
- प्रोटिस्टा में अलैंगिक जनन द्विविखण्डन (Binary fission) या बहुविखण्डन (Multiple fission) द्वारा होता है।
- लैंगिक प्रजनन युग्मक संलयन (Syngamy) अर्थात दो युग्मकों के संलयन से होता है।
- प्रोटिस्टा जगत में विभिन्न प्रकार के प्राणी इस प्रकार है। प्रकाश संश्लेषी प्रोटिस्टा – ये प्रोटिस्टा प्रकाश संश्लेषण में सक्षम है क्योंकि इनमें क्लोरोफिल उपस्थित रहता है। प्रकाश संश्लेषी प्रोटिस्टा में तीन प्रमुख संघ हैं:

  अ) डायनोफ्लैजीलेट्स (Dinoflagellates)

  ब) डायएटम्स (Diatoms)

  स) युग्लीना के समान कशाभी या यूग्लीनाभ (Euglenoid)
- अनेक डायनोफ्लैजीलेट्स जीव–संदीप्ति (Bio-luminescence) प्रदर्शित करते हैं। जिससे समुद्र की सतह जलते हुए अंगारो के समान दिखाई देती है। इसलिए इन्हें अग्नि शैवाल (Fire algae) भी कहते हैं।
- डायटम के मरणोपरान्त डायटमी मृत्तिका (Diatomaceous earth) प्राप्त होती है। डायटमी मृत्तिका समुद्री तल में जम जाती है, इसको पीसकर जो पाउडर प्राप्त होता है उसका प्रयोग टूथ–पेस्ट (Tooth paste) तथा धातु पॉलिश बनाने में किया जाता है।
- डायटमी मृत्तिका रन्ध्रीय (Porous) होने के कारण छन्नको (Filters) के बनाने में काम आती है।
- यूग्लीनाभ प्रोटिस्ट एक विलक्षण समूह है क्योंकि इसमे पाये जाने वाले जीवधारी जन्तुओं और पौधों, दोनों के लक्षण प्रदर्शन करते हैं। प्रकाश की उपस्थिति मे जीव प्रकाश संश्लेषण करते हैं तथा अन्धेरे में इनके हरितलवक लुप्त हो जाते हैं उदाहरण– यूग्लीना (Euglena)
- अधिकांश प्रकाश–संश्लेषी प्रोटिस्टो में कोशिका भित्ति होती है परन्तु यूग्लीना में इसका अभाव होता है, इसलिए इसे प्रोटोजोआ में शामिल किया जाता है।
- **यूग्लीना** पादपों तथा जन्तुओं के बीच की कड़ी माना जाता है।

### कवक *(Fungi)*

- कवक बहुकोशिकीय यूकैरियोटिक जीव हैं। ये परजीवी, सहजीवी और मृतोपजीवी (Saprophytes) होते हैं।
- इनका शरीर अनेक पतले तंतुओं का बना होता है, जिन्हे कवक तंतु (Hyphae) कहते हैं। ये तंतु मिलकर जाल बनाते हैं, जिन्हे कवक जाल (Mycelium) कहते हैं।
- कवक प्रकाश संश्लेषण नहीं कर सकते क्योंकि इनमें पर्णहरित नहीं होता।
- ये ज्यादातर बहुकेन्द्रकी (Coenocytic) होते हैं।
- इनकी कोशिका भित्ति काइटिन की बनी होती है।
- जनन लैंगिक और अलैंगिक दोनों तरीकों से होता है।
- कवक जगत दो प्रभागों में वर्गीकृत है:

  i) मिक्सोमाइकोफाइटा (Myxomycophyta)

  ii) यूमाइकोफाइटा (Eumycophyta)

**मिक्सोमाइकोफाइटा**

- इस फफूंदी या कवक को अवपंक फफूंदी (Slime moulds) भी कहते हैं। इनमें कोशिका भित्ति नहीं होती तथा इनका शरीर अमीबा के समान होता है जो अमीबाभ (Amoeboid) तरीके से गतिमान होकर ठोस खाद्य पदार्थ ग्रहण करता है। परन्तु कछ स्थितियों मे यह बीजाणु (Spores) उत्पादन करने वाली संरचना भी बनाते हैं।

**यूमाइकोफाइटा अथवा यथार्थ कवक**

- यह कवक यथार्थ कवक भी कहलाती है क्योंकि इसमें यथार्थ कवक के लक्षण पाये जाते हैं। इस कवक में स्पष्टतः एककोशिकीय या बहुकोशिकीय शरीर होता है। बहुकोशिकीय शरीर कवक तंतु (Hyphae) का बना होता है। ये सभी बीजाणु उत्पन्न करने वाली संरचनाएँ बनाते हैं।
- यूमाइकोफाइटा को निम्न वर्गों में बांटा गया है:

  i) **काइट्रिडियोमाइसिटिस** (Chrytridiomycetes)

  ii) **ऊमाइसेटीज** (Oomycetes)– उदाहरण श्वेत किट्ट

(White rust), मृदु रोमिल (Downy mildew)

iii) **जाइगोमाइसिटिज** (Zygomycetes)– उदाहरण ब्रेड फफूंदी (Bread mould or Rhizopus)

iv) **ऐस्कोमाइसिटिज** (Ascomycetes)– उदाहरण खमीर (Yeast), पैनिसिलियम (Pencillium or Pink mould), जिससे पेनिसिलिन दवा बनती है।

v) **बेसिडियोमाइसिटिज** (Basidiomycetes)- उदाहरण रस्ट (Rust) व स्मट (Smut)

vi) **ड्यूटरोमाइसिटीज** (Deuteromycetes)- अल्टरनेरिया (Alternaria), फ्यूजेरियम (Fusarium)

- लैंगिक प्रजनन के फलस्वरूप यथार्थ कवकों में बीजाणुओं का निर्माण होता है।

**उदाहरण**

i) ऊमाइसिटेज (Oomycetes) वर्ग के जीवों में निषिक्ताण्ड (Oospores) नामक बीजाणु बनता है।

ii) जाइगोमाइसिटीज (Zygomycetes) वर्ग के जीवों में युग्माणु (Zygospores) बीजाणु बनता है।

iii) ऐस्कोमाइसिटिज (Ascomycetes) वर्ग के जीवों में थैलीनुमा रचना जिसे एस्कस (Ascus) कहते हैं, उसमें 8 ऐस्कोबीजाणु (Ascospores) बनते हैं।

iv) बेसिडियोमाइसिटिज (Basidiomycetes) वर्ग के जीवों में बैसिडिया (Basidia) नामक रचना में 4 बैसिडियोबीजाणु (Basidiospores) बनते हैं।

## पादप जगत

***(Kingdom Plantae)***

- पादप बहुकोशिकीय, यूकैरियोटिक जीव हैं जिनकी कोशिकाएं, भित्ति द्वारा घिरी होती है। इनमें हरित लवक पाये जाते हैं, जिनमें पर्णहरित होता है जो प्रकाश संश्लेषण में मदद करते हैं।
- प्लान्टी मे ज्यादातर प्रकाश संश्लेषी, संवहनी ऊतक वाले जीव पाये जाते हैं।
- **संवहनी ऊतक–** वे ऊतक, जो पौधे में खनिजों, पानी तथा भोजन के परिवहन में काम आते हैं, जैसे दारू और पोषवाह (Xylem and Phloem)।
- जनन प्रक्रिया लैंगिक और अलैंगिक दोनों होती है। लैंगिक प्रक्रिया में एक के बाद एक अगुणित पीढ़ी (Gametophyte या युग्मकोदभिद्) और द्विगुणित पीढ़ी (Sporophyte या बीजाणुउदभिद्) का एकान्तरण चक्र चलता है।
- प्लान्टी जगत में पाये जाने वाले जीव हैं-

i) लाल, भूरा, हरे शैवाल (Algae)

ii) ब्रायोफाइट (Bryophytes)

iii) संवहन तंत्र वाले पौधे- जैसे आवृत्तबीजी, नग्नबीजी, टेरिडोफाइट

**I) शैवाल**

- **लाल शैवाल** (Rhodophyta)- ये समुद्री शैवाल है जो चट्टानों या दूसरे अन्य शैवालो से जुड़े रहते हैं। इसका लाल रंग वर्णक 'फाइकोएरिथ्रिन' (Phycoerythrin) के कारण होता है।
- **भूरा शैवाल** (Pheophyta)– ये समुद्री शैवाल है जो चट्टानों से जुड़े रहते हैं। इसका भूरा रंग 'फ्यूकोजैन्थिन' के कारण होता है।
- **हरा शैवाल** (Chlorophyta)– इनमें पर्णहरित होता है जिससे ये हरे रंग के होते हैं ये समुद्री तथा अलवणीय जल दोनों में पाये जाते हैं।

**II) ब्रायोफाइटा (Bryophyta)**

- ये बहुकोशिकीय स्थलीय जीव होते हैं जिनमें संवहनी ऊतक तथा जड़े नहीं होती। इसका पादप मुख्यतः **युग्मकोद्भिद्** (Gametophyte) होता है।
- ब्रायोफाइटा को तीन वर्गों में बांटा जाता है:

i) **हिपोटिसी** (Hepaticae) (Liverworts) उदाहरण- पोरेला (Porella), रिक्सिया (Riccia), मार्कंसिया (Marchantia)

ii) **ऐन्थोसिरोटी** (Anthocerotae) (Hornworts) उदाहरण- ऐन्थोसेरोस (Anthoceros)

iii) **मसाई** (Musci) (Mosses) उदाहरण- फ्यूनेरिया (Funaria), स्फेगनम (Sphagnum)

**III) A) टेरिडोफॉइटा (Pteridophyta)**

- इस वर्ग में वे पौधे हैं जिनमें बीज, व पुष्प नहीं बनते परन्तु संवहनी ऊतक (Vascular system) उपस्थित होता है, जैसे– दारू और पोषवाह।
- इसका मुख्य पौधा बीजाणुउद्भिद (Sporophyte) होता है, जिसमे जड़, पत्ती व स्तम्भ होता है।

- बीजाणु बीजाणुधानियों में उत्पन्न होते हैं।
- बीजाणुधानियां जिस पत्ती पर उत्पन्न होती है, उसे बीजाणुपर्ण (Sporophyll) कहते हैं।
- युग्माकोद्भिद् (Gametophyte) पौधे पर नर जननांग पुंधानी (Antheridium) तथा मादा जननांग (Archaegonium) उत्पन्न होते हैं।
- टेरिफाइटा के अन्तर्गत 4 सब-फाइलम आते हैं।
  1. साइलोफाइटा, उदाहरण- साइलोटम (Psilotum)
  2. लाइकोफाइटा उदाहरण लाइकोपोडियम (Lycopodium)
  3. स्फिनोफाइटा, उदाहरण- इक्वीसीटम (Equisetum)
  4. टेरोफाइटा, उदाहरण- ड्रायोप्टेरिस या फर्न (Dryopteris)

**III) B) अनावृतबीजी (Gymnospermophyta)**

- इस वर्ग के पौधों के बीज नग्न रूप से पौधों पर लगे रहते हैं, अर्थात् बीजाण्ड (Ovules) अथवा बीज (Seed) किसी आवरण में बन्द नहीं होते।
- इनमें सिकोया डेन्डेरॉन (Sequoia dendron) नामक पेड़ भी शामिल हैं, जो सबसे **लम्बा पौधा** है।
- जिम्नोस्पर्म को दो भागों में बांटा जाता है:
  i) साइकैडोफाइटा (Cycadophyta), उदाहरण- साइकस।
  ii) कॉनिफेरोफाइटा (Coniferophyta), उदाहरण- पाइनस, जिंगो।

**III) C) आवृतबीजी (Angiosperms or Anthophyta)**

- ये बहुकोशिकीय पुष्पीय पादप हैं जिनमें उन्नत प्रकार के संवहनी ऊतक होते हैं। बीज अंडाशय मे बन्द होते हैं जो निषेचन के पश्चात फल में परिवर्तित होते हैं। इसे दो वर्गों में बांटा जाता है
  i) एकबीजपत्री (Monocotyledens)
  ii) द्विबीजपत्री (Dicotyledons)
- एकबीजपत्री बहुकोशिकीय नवीन पौधे होते हैं, जिनकी पत्तियों में समानांतर शिराएं (Parallel veins) होती है तथा फूलों के भाग अधिकतर तीन या उसके गुणकों में पाये जाते हैं तथा संवहनी ऊतक संवहनीय (Vascular bundle) पूलों में व्यवस्थित नहीं होते, उदाहरण- चावल, गेहूँ, प्याज।
- द्विबीजपत्री वे पौधे हैं जिनमें पत्ती का शिरा विन्यास (Reticulate venation) होता है तथा फूलों के भाग चार व पाँच गुणकों में होते हैं तथा संवहनी ऊतक संवहनीय फूलों में व्यवस्थित होते हैं, उदाहरण- सूरजमुखी, डहेलिया, सरसों, आम, बरगद।

**सारांश**

- शैवाल, ब्रायोफाइटा, टेरीडोफाइटा आदि बिना बीज के पौधे हैं। जिम्नोस्पर्म बिना आवरण वाले बीज के तथा ऐन्जियोस्पर्म आवरण वाले बीज के पौधे हैं।
- पृथ्वी पर पादपों का विकास क्रम

शैवाल → ब्रायोफाइट्स → टैरीडोफाइट्स → जिम्नोस्पर्मी → ऐन्जियोस्पर्मी।

## ऐनीमेलिया जगत (जन्तु जगत)

1. ऐनीमेलिया जीव यूकैरियोटिक होते हैं। इनकी कोशिका मे **कोशिका भित्ति** नहीं होती है तथा ये प्रकाश संश्लेषी भी नहीं होते।
2. देह गुहा अथवा सीलोम (Body cavity or Coelom)
   - देह भित्ति (Body wall) तथा आहारनाल के मध्य द्रव से भरी गुहा को सीलोम कहते हैं।
   - **अगुहिक प्राणी** (Acoelomate)- इनमें देह गुहा नहीं होती है।
   - **कूटगुहिक प्राणी** (Pseudoceolomate)- इनमें देह गुहा की वास्तविक संरचना नहीं होती है।
   - **यूसीलोमेटा प्राणी**- इनमें देह गुहा ऐपिथीलियम कोशिकाओं (Euceolomate) से रेखित होती है।
3. प्रोटोजोआ, पोरिफेरा, सीलेण्ट्रेटा में देहगुहा नहीं होती, अखंड कृमियों में कूटगुहा होती है तथा ऐनिलिडा, आथ्रोपोडा, मोलस्का, इकाइनोडर्मेटा तथा कॉर्डेटा आदि में वास्तविक देहगुहा होती है।
4. **देह खण्डीभवन** (Body segmentation)- स्पंज, सीलेण्ट्रेट्स तथा अखंड (गोल) कृमियों में शरीर दो समान खंडो में विभाजित नही होता, परन्तु चपटे कृमियो से लेकर पृष्ठवंशियों तक शरीर खंडो में विभाजित होता है।
5. ऐनीमेलिया जगत को दो भागों में बांटा जाता है:

(i) प्रोटोजोआ तथा (ii) मेटाजोआ

- एक कोशिकीय प्राणी प्रोटाजोआ में तथा बहुकोशिकीय मेटाजोआ में आते हैं। प्रोटाजोआ के एक संघ तथा मेटाजोआ को 9 संघों में विभाजित किया जाता है।

7. **प्रोटोजोआ** (Protozoa)– इसमें एक कोशिकीय जीव आते हैं।

- इनमें पादाभों, कक्षाभों द्वारा प्रचलन होता है।
- इनमें सभी जैविक क्रियाएँ (भोजन ग्रहण, श्वसन, उत्सर्जन) एक ही कोशिका द्वारा होता है।
- ये परजीवी या स्वतंत्र जीवी होते हैं।
- प्रजनन लैंगिक तथा अलैंगिक दोनों विधियों द्वारा होता है। उदाहरण अमीबा, पैरामीशियम, जिआर्डिया।

8. **पोरीफेरा** (Porifera)

- ये बहुकोशिकीय जीव है जिनमें कोशिकाएं ऊतकों का निर्माण नहीं करती।
- इनमें अरीय सममिति (Radial symmetry) पाई जाती है।
- शरीर कंकाल कंटिकाओ (Spicules) का बना होता। शरीर पर असंख्य छिद्र (Ostia) पाए जाते हैं जिनके द्वारा जल तथा भोजन शरीर में पहुँचते हैं।
- शरीर की गुहा को स्पंज गुहा (Spongocoel) कहते हैं। जिसके द्वार को ऑस्कुलम कहते हैं, उदाहरण- स्पंज (Sycon)।

9. **सीलेनट्रेटा** (Coelentrata)

- इसे निडेरिया (Cnidaria) भी कहते हैं। क्योंकि इस संघ के जीवों में दंशक कोशिकाएं (Stinging cell) पाए जाते हैं। ये अरीय सममिति वाले, द्विस्तरीय प्राणी हैं।
- शरीर में एक गुहा होती है जिसे सिलेन्ट्रॉन (Coelentron) कहते हैं, ये अगुहिक प्राणी होते हैं।
- इन जन्तु के जीवन में दो अवस्थाएँ पॉलिप व मेड्यूसा मिलती हैं।
- जनन - लैंगिक व अलैंगिक दोनों प्रकार से होता है, उदाहरण-हाइड्रा, जेलीफिश, सी ऐनीमोन।

10. **प्लेटीहेल्मिन्थीज** (Platyhelminthes) चपटे कृमि

- इनका शरीर चपटा, त्रिस्तरीय, कोमल तथा देह गुहा रहित होता है।
- अधिकांशतः परजीवी होते हैं।
- उत्सर्जन के लिए विशिष्ट प्रकार की कोशिकाएं होती हैं जिन्हें ज्वाला कोशिकाएं (Flame cell) कहते हैं।
- प्रजनन तंत्र विकसित तथा द्विलिंगी होते हैं, उदाहरण- लिवर फ्लूक (Liver fluke), फीताकृमि (Tape worm)
- तन्त्रिका तंत्र साधारण होता है।

11. **एस्कीहेलेमेन्थीज** (Aschelminthes) अखंड कृमि

- इनकी देह में खंड नहीं होती।
- देहगुहा - कूटगुहा होती है।
- गोल शरीर दोनों ओर से नुकीला होता है।
- ये त्रिस्तरीय (Triploblastic) प्राणी है।
- तन्त्रिका तंत्र विकसित होता है परन्तु परिसंचरण तंत्र विकसित नहीं होता।
- एकलिंगी जीव, उदाहरण- ऐस्केरिस (Ascaris) वुचरेरिया (Wucherria)।

12. **सखंड कृमि** (Annelida ऐनीलिडा)

- शरीर मुलायम, लम्बा, खंडों में बँटा होता है। देह गुहा भी खंडों में बँटी होती है।
- प्रचलन के लिए काइटिन के बने सीटी (Setae) होते हैं।
- परिसंचरण तंत्र तथा तंत्रिका तंत्र विकसित होता है।
- उत्सर्जी अंग वृक्क के रूप में होते हैं।
- एकलिंगी तथा उभयलिंगी दोनों प्रकार के जीव पाए जाते हैं। उदाहरण– केंचुआ, जोंक, नेरीस।

13. **संघ आर्थोपोडा** (Arthopoda)

- यह सबसे बड़ा व सफल संघ है।
- खण्डयुक्त शरीर वाले जीव।
- शरीर तीन भागों में विभक्त होता है, सिर, वक्ष तथा उदर।
- इनकी देह गुहा हीमोसील कहलाती है। इसमें रूधिर भरा रहता है। इनके रुधिर में हीमोस्यानीन पाया जाता है।
- बाह्य कंकाल काइटिन का बना होता है।

14. **मौलस्का** (Mollusca)

- इनका शरीर मुलायम तथा खंडहीन होता है।
- श्वसन गिल्स (Gills) द्वारा होता है।
- शरीर की त्वचा एक आवरण से ढ़की होती है जिसे प्रावार (Mantle) कहते हैं। तथा उत्सर्जन वृक्कों द्वारा होता है, उदाहरण- घोंघा (Pila, पाइला), सीपी (Unio), ऑक्टोपस

Octopus

15. **इकाइनोडर्मेटा** (Echinodermata)

- ये त्रिस्तरीय, खण्डविहिन, समुद्री जीव है।
- शरीर अरीय होता है।
- त्वचा के नीचे चूने का अंतः कंकाल होता है।
- शरीर गोल, नलिका के आकार का या तारे के समान होता है।
- प्रचलन, भोजन ग्रहण करने हेतु नाल पाद (Tube fecet) होते हैं। ये संवेदी अंग का कार्य भी करते हैं।
- तंत्रिका तंत्र में मस्तिष्क विकसित नहीं होता, उदाहरण– सितारा मछली (Star fish) समुद्री अर्चिन, पंखतारा।

16. **कॉर्डेटा**

- कॉर्डेटा संघ के जन्तु के तीन मुख्य लक्षण हैं।
- **नोडोकॉर्ड**, जीवन में किसी न किसी अवस्था में क्लोम छिद्र तथा पृष्ठ सतह पर एक नालदार तन्त्रिका रज्जु का पाया जाना।

**कॉर्डेटा के कुछ मुख्य वर्ग**

i) **पिसीज** (Pisces) में असमतापी मछलियाँ सम्मिलित हैं। जल में रहने वाले जबड़े वाले जीव हैं। शरीर शल्कों से ढ़का होता है। क्लोम द्वारा श्वसन होता है; ये जीव पंखों द्वारा चलते हैं; इनके हृदय में दो कक्ष होते हैं। पिसीज के दो समूह होते हैं: कॉड्रिक्थीज तथा ऑस्ट्रिक्थीज। कॉन्ड्रिक्थीज (Chondrichthyes) जीवों के शरीर का अंतः कंकाल उपास्थि का बना होता है तथा ऑस्ट्रिक्थीज के शरीर का अंतः कंकाल अस्थि का बना होता है।

ii) **एम्फिबिया** (Amphibia)– ये जीव जमीन और पानी दोनों में रह सकते हैं। ये **असमतापी** कशेरूकी हैं। इनका शरीर चार टांगों से बना तथा बिना शल्क का होता है। हृदय तीन कक्षीय होता है जिसमें दो अलिंद और एक निलय होता है।

iii) **रेप्टीलिया** (Reptilia)– इनमें कुछ जीव जमीन पर तथा कुछ पानी में रहते हैं ये असमतापी जीव हैं।

- इनकी त्वचा सूखी तथा खुरदरी होती है तथा त्वचा पर शल्कों का बाह्य कंकाल होता है।
- श्वसन फेफड़ों द्वारा होता है।
- निषेचन शरीर के अन्दर होता है।
- इनका हृदय तीन कक्षीय होता है परन्तु मगरमच्छ का हृदय स्तानियों की भाँति **चार कक्षीय** होता है, उदाहरण– छिपकली, साँप, मगरमच्छ, कछुआ।

iv) **एवीज** (Aves) – यह पक्षी समतापी वर्ग है। इनका शरीर पंखो से ढ़का होता है। दैहिक तापमान अन्य प्राणियों से अधिक रहता है। मुख चोंच द्वारा घिरा रहता है तथा दाँत नहीं होते **अस्थियां खोखली** होती है, इनमें वायु कोषाएं (Air Pouches) होती हैं, हृदय चार कक्षीय होता है, उदाहरण– पावो (मोर), पैसर (चिड़िया)

v) **मैमेलिया** (Mammalia) – ये उच्चवर्ग के समतापी प्राणी हैं। इनका शरीर **बालों** से ढका होता है तथा ये कशेरूकी हैं। इनमें **दुग्ध ग्रन्थियाँ** पाई जाती है और भ्रूण का पोषण **अपरा** (Placenta) द्वारा होता है। इन जीवों का हृदय चार कक्षीय होता है, उदाहरण– कंगारू, मनुष्य।7

# 5. श्वसन

- श्वसन एक जटिल प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड गैसों का विनिमय होता है।
- ऊर्जा मुक्त करने के लिए पचित खाद्य पदार्थों का ऑक्सीकरण होता है।
- श्वसन एक जैव-रासायनिक प्रक्रिया है, जो कोशिकाद्रव्य तथा माइटोकॉन्ड्रिया में होती है।
- श्वसन के समय मुक्त ऊर्जा एडेनोसीन ट्राइफॉस्फेट (A.T.P.) में निहित होकर रासायनिक रूप में भंडारित होती है।

## श्वसन के दो प्रकार

1. वायवीय (Aerobic)
2. अवायवीय (Anaerobic)

## वायवीय या आक्सी श्वसन

**(Aerobic Respiration)**

- ऑक्सीजन द्वारा नियंत्रित श्वसन की प्रक्रिया वायवीय श्वसन कहलाती है।
- इस प्रक्रिया में खाद्य पदार्थों (ग्लूकोज) का आक्सीकरण $O_2$ की उपस्थिति में पूर्ण रूप से कार्बन डाइआक्साइड एवं जल में विखंडित हो जाता है एवं ऊर्जा मुक्त होती है। इस मुक्त ऊर्जा का उपयोग ATP उत्पादन में होता है।

ग्लाइकोलिसिस क्रेब चक्र

ग्लूकोज पायरूवेट $CO_2+H_2O$ + ऊर्जा ↑

कोशिका द्रव्य में

($O_2$ आवश्यक नहीं) ($O_2$ की उपस्थिति में)

$C_6H_{12}O_6+6O_2$ $6CO_2+6H_2O$ + 673 K.Cal. or 38 ATP

## अवायवीय या अनाक्सी श्वसन

**(Anaerobic Respiration)**

- जीवाणु परजीवीयों और यीस्ट जैसे जीवधारी खाद्य पदार्थों का ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में अपूर्ण रूप से $CO_2$ और सरल कार्बनिक पदार्थ जैसे एथिल एल्कोहल, एसिटिक अम्ल, साइट्रिक अम्ल, लेक्टिक अम्ल, आक्सेलिक अम्ल में हो जाता है।

$C_6H_{12}O_6$ $2C_2H_5OH+2CO_2$ + 21 K.Cal. or 2ATP↑

- अवायवीय श्वसन अत्यधिक पेष्ठीय क्रिया के समय हमारी पेष्ठियों में भी होता है एवं लेक्टिक अम्ल का निर्माण कर थकान उत्पन्न करता है।
- इस प्रक्रिया में कुछ पादपों एवं जीवाणुओं में एथिल एल्कोहल तथा पेष्ठियों में लैक्टिक अम्ल बनता है।

ग्लाकोलिसिस किण्वन

ग्लूकोज पायरूवेट $C_2H_5OH+H_2O$ऊर्जा

कोष्ठिका द्रव्य में $O_2$ की

$O_2$ आवष्ठयक नहीं अनुपस्थिति में

ग्लूकोज पायरूवेट लैक्टिक अम्ल

(थकान)

## वायवीय एवं अवायवीय श्वसन में अंतर

**वायवीय श्वसन**

1. ऑक्सीजन का उपयोग होता है।
2. कार्बन डाइऑक्साइड एवं जल अंतिम उत्पाद है।
3. यथेष्ट ऊर्जा मुक्त होती है।

**अवायवीय श्वसन**

1. ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होता है।
2. एल्कोहल या लैक्टिक अम्ल व $CO_2$ अंतिम उत्पाद हैं।
3. अपेक्षाकृत कम ऊर्जा मुक्त होती है।

## पादपों में श्वसन

- $O_2$ एवं $CO_2$ श्वसन गैस हैं।
- प्राणियों की तुलना में पादपों का श्वसन निम्न रूपों में भिन्न होता है:

1. पादपों के सभी भाग, जैसे - मूल (जड़), तना, पत्ती आदि श्वसन करते हैं।
2. पादपों के एक भाग से दूसरे भाग तक गैसों का परिवहन बहुत कम होता है।

Gupta Classes

3. पादपों की श्वसन दर प्राणियों की अपेक्षा धीमी होती है।

- जड़े (मूल) मृदा में उपस्थित ऑक्सीजन को विसरण (Diffusion) की क्रिया द्वारा ग्रहण करते हैं।
- मूल रोम (Root Hair) Oxygen के सीधे सम्पर्क में रहते हैं।
- मूल रोमों से ऑक्सीजन जड़ की अन्य कोशिकाओं तक पहुँचती है।
- इस प्रकार $CO_2$ कोशिकाओं से मृदा की ओर विसरित होती है।
- जड़ के पुराने हिस्से जहाँ मूल रोम नहीं होते, वे मृद कोशिका से ढ़के होते हैं जिसमें सूक्ष्मरंध्र होते हैं जिन्हें **वातरंध्र** (Lenticels) कहते हैं, इसी के द्वारा मृदा और मूल की आंतरिक जीवित कोशिकाओं के बीच गैसीय विनिमय होता है।
- काष्ठीय (Woody) पादपों में गैसीय विनियम के लिए छाल पर वातरंध्र पाए जाते हैं।
- सूक्ष्मछिद्र जिसे रंध्र या Stomata कहते हैं पत्तियों की सतह पर पाए जाते हैं।
- श्वसन के लिए $O_2$ स्टोमेटा के द्वारा विसरित होकर पत्ती की कोशिकाओं तक पहुँच जाती है, जब कोशिकाओं में $CO_2$ की सांद्रता बढ़ जाती है तो वातावरण में मुक्त करने के लिए स्टोमेटा खुल जाते हैं।
- श्वसन गैसों का विनियम पत्तियों में विसरण द्वारा होता है।

## प्राणियों में श्वसन

**(Respiration in Animal)**

- अमीबा – श्वसन गैसें परिवेष्ठी माध्यम तथा कोशिका के बीच प्लाज़्मा - झिल्ली में से विसरित होकर अन्दर-बाहर आती जाती हैं।
- अधिकतर जलीय प्राणियों मछली, झींगा, सीप) में श्वसन के लिए **क्लोम** (Gills) पाए जाते हैं जो जल में विलीन ऑक्सीजन को अवशोषित कर लेते हैं तथा शरीर से कार्बन डाइऑक्साइड को बाहर निकालते हैं।
- स्थलीय प्राणियों जैसे कि छिपकली, पक्षी, मनुष्य में श्वसन अंग फुप्फुस (Lungs) होता है।
- केचुएं (Earthworm) में त्वचा, वायु से गैसों के विनिमय का कार्य करती है।
- मेंढ़क त्वचा और फुप्फुस दोनों से श्वास लेते हैं।
- काकरोच – काकरोच में नलिका - जैसी संरचनाएं - वातिकाएं (tracheae) तथा लघुवातिकाएं (tracheoles) होती हैं। वातिकाएं बाहर को स्पाइरेकल (spiracle) नामक रेखा-छिद्रों से खुलती हैं। स्पाइरेकल, वक्ष तथा उदर क्षेत्रों में अंतराखंडश्वा व्यवस्थित होते हैं। इन्हीं नलिकाओं के विशाखित तंत्र के द्वारा देह की कोशिकाएं एवं देह-तरल बाहर की वायु के साथ सीधा संपर्क बनाए रखते हैं। उदरीय पेशियों की सहायता से गैसें भीतर को जातीं और भीतर से बाहर को आती हैं।

## मनुष्य में श्वसन

- श्वसन की पूरी प्रक्रिया दो भागों में बँटी है:
  1. श्वासोच्छवास (Breathing)
  2. श्वसन अर्थात् श्वसनी पदार्थों का ऑक्सीकरण
- श्वासोच्छवास में $O_2$ वाली वायु फेफड़ों में जाती है, जहाँ पर $CO_2$ और $O_2$ का विनिमय होता है।
- श्वसन में श्वसनी पदार्थों का ऑक्सीकरण होता है। यह प्रक्रिया कोशिकाओं में होती है तथा ऑक्सीकरण के लिए रक्त द्वारा $O_2$ ऊतकों तक पहुँचती है और श्वसनी पदार्थों के ऑक्सीकरण के पश्चात बनी $CO_2$ रक्त द्वारा फेफड़ों में आकर निःश्वसन द्वारा निकाल दी जाती है।

वायु → नासाद्वार → नासागुहा → ग्रसनी → लैरिंक्स → श्वासनली → कूपिकाएँ → श्वसनिकाएँ → श्वसनियाँ → (वायुकोष्ठा)

## मनुष्य में श्वसनांग

**(Respiratory Organs in Man)**

- श्वसन तंत्र के अंतर्गत वे सभी अंग आते हैं जिससे होकर वायु का आदान-प्रदान होता है जैसे- नासिका, ग्रसनी, लैंरिक्स, ट्रेकिया, ब्रोंकाई एवं बैक्रियोल्स और फेफड़े।

1. **नासिका**- नासिका-छिद्रों में वायु ($O_2$) प्रवेश्ठा करती है। नासिका छिद्रों के भीतर रोम या बाल होते हैं जो धूल के कण तथा सूक्ष्मजीवों को शरीर में प्रवेश्ठा करने से रोकता है।
   - नासिका-छिद्रों की गुहा म्यूकस कला (Mucus membrane) से स्तरित होती है, जो म्यूकस स्रावित कर वायु को नम बनाती है।
2. **ग्रसनी** (Pharynx)- वायु नासिका-छिद्रों से ग्रसनी में आती है। इसकी पार्श्व भित्ति में मध्यकर्ण की यूस्टेकियन नलिका (Eustachian tube) भी खुलती है।
3. **लैरिंक्स** (Larynx)- इसे स्वर-यंत्र भी कहते हैं। इसका

मुख्य कार्य ध्वनि उत्पादन करना है। श्वासनली का ऊपरी सिरा एक छोटे छिद्र के द्वारा ग्रसनी से जुड़ा होता है जिसे **ग्लाटिस** कहते हैं ग्लाटिस एक कपाट द्वारा बंद होता है। इसे इपिग्लाटिस (Epiglatis) कहते हैं। यह ग्लाटिस द्वार को बंद करके भोजन को श्वासनली में जाने से रोकती है।

4. **ट्रेकिया** (Trachea)– यह वक्ष गुहा में होता है यहाँ यह दो शाखाओं में बँट जाती है इसमें से एक दायें फेफड़े में तथा एक बायें फेफड़े में जाकर फिर शाखाओं में विभक्त हो जाती है।
5. **ब्रोंकाई**– ट्रेकिया, वक्षीय गुहा में जाकर दो भागों में बँट जाती हैं जिसे ब्रोंकाई कहते हैं।
6. **फेफड़े** (Lung)– यह वक्ष गुहा में एक जोड़ी अंग है जिसका आधार डायाफ्राम पर टिका रहता है। प्रत्येक फेफड़ें में करोड़ों एल्वियोलाई (Alveoli) होते हैं।

- प्रत्येक फेफड़ा एक झिल्ली द्वारा घिरा रहता है जिसे **प्लूरल मेम्ब्रेन** (Pleural membrane) कहते हैं जिसमें द्रव भरा होता है जो फेफड़ों की रक्षा करती है।

### गैस-विनिमय तथा वर्ज्य पदार्थों का निष्कासन

**गैसीय अभिगमन (Gaseous Transport)**

**(क) ऑक्सीजन अभिगमन** (फेफड़ों से ऊतकों में) $O_2$ का कारगर रूप में अभिगमन एक सम्मिश्रण प्रोटीन हीमोग्लोबीन (haemoglobin) के द्वारा होता है। यह लौह–सम्पन्न प्रोटीन लाल रक्त कोशिकाओं (RBCs) के भीतर भरा होता है। हीमोग्लोबिन $O_2$ की उससे 67 गुना अधिक मात्रा ले जा सकता है जितना कि अन्य अकेला प्लाज़्मा ले जाता है। रक्त का ऑक्सीजनीकरण फेफड़ों के भीतर होता है।

ऑक्सीजन के अणु हीमोग्लोबिन के साथ एक उत्क्रमणीय बंधन बनाते हैं –

फुफ्फुस कूपिकाओं में

$Hb + 4O_2$      $Hb(4O_2)$

सक्रिय ऊतकों में

हीमोग्लोबिन      ऑक्सीहीमोग्लोबिन

**(ख) कार्बन डाइऑक्साइड अभिगमन** (ऊतकों से फेफड़ों में)

सक्रिय ऊतक लगातार $CO_2$ बनाते रहते हैं। इस $CO_2$ को फेफड़ों तक लाना होता है ताकि उसको वहाँ पर बाहर निकाला जा सके। $CO_2$ का अभिगमन तीन विधियों से हाता है –

1. रक्त प्लाज़्मा में भौतिक रूप में घुली हुई। (इस विधि में कुल अभिगमित $CO_2$ का केवल 8% भाग ही ले जाया जाता है)।
2. RBCs के हीमोग्लोबिन में सीधे संयोजित होकर जिससे कार्बेमीनोहीमोग्लोबिन (Carbaminobaemo-globin) बन जाता है। (केवल लगभग 11 प्रतिशत)
3. प्लाज़्मा में घुली होकर बाइकार्बोनेटों (bicarbonates) के रूप में $CO_2$ का सबसे बड़ा अंश यही होता है, लगभग 81 प्रतिशत।

- फेफड़ों के भीतर इन तीनों अभिगमित स्वरूपों में लायी गई $CO_2$ कूपिकीय वायु में छोड़ दी जाती है और अंततः वहाँ से सांस द्वारा बाहर निकाल दी जाती है।

## मानव में श्वासोच्छवास की विधि

**(Mechanism of Breathing in Man)**

- इसे फुफ्फुस संवातन (Pulmonary Ventilation) भी कहते हैं
- यह प्रक्रिया दो उपचरणों में विभाजित है:

### 1. अंतःश्वसन (Inspiration)

- अंतःश्वसन के दौरान डायाफ्राम की अरीय मांसपेशियाँ (Radial muscles) तथा बाह्य अन्तरापर्शुक पेशी (External Intercostal muscle) सिकुड़ती है।
- जिसके फलस्वरूप डायाफ्राम उदर की ओर झुक जाता है और फुफ्फुस में वायुदाब कम होने लगता है, इसलिए वायु वातावरण से नासिका द्वारा फेफड़ों में प्रवेश करती है।
- इस प्रकार अंतःश्वसन में फुफ्फुस के भीतर वायु का आना उसके भीतर वायुदाब पर निर्भर करता है।

### 2. निःश्वसन (Expiration)

- निःश्वसन के दौरान डायाफ्राम की आरीय पेशियों में तथा अन्तः अन्तरापर्शुक पेशियों में शिथलन होती है जिसके कारण डायाफ्राम वक्ष की ओर ऊपर उठता है और वक्षीय भित्ति भीतर की ओर गति करती है। इससे फुफ्फुस में वायुदाब अधिक हो जाता है और फेफड़ों से वायु नासिका से होती हुई बाहर चली जाती है।

## श्वसन से संबंधित तथ्य

- सामान्य अवस्था में श्वसन की दर 15–18 प्रति मिनट है।
- कठिन परिश्रम या व्यायाम के समय श्वसन दर 20 से 25 गुणा बढ़ जाती है।

Gupta Classes

- छ्वास लेने की क्रिया के प्रत्येक चक्र में लगभग 500 मिली. वायु अंत: छ्वसन एवं नि:छ्वसन होता है।
- 24 घंटे में हम 15000 लीटर वायु का अंत: छ्वसन करते है।
- वायु छ्वसन के दौरान एक ग्लूकोज अणु से 36 से 38 ATP अणु बनते हैं, जबकि अवायु छ्वसन में सिर्फ 2ATP अणु बनते हैं।

**छ्वासन तथा छ्वसन में अंतर**

| **छ्वासन** (Breathing) | **छ्वसन** (Respiration) |
|---|---|
| 1. यह एक भौतिक क्रिया है | 1. यह एक रासायनिक प्रक्रिया है। |
| 2. इसमें छ्वासन मार्ग तथा फेफड़े निहित हैं। | 2. यह प्रत्येक कोष्ठिका के भीतर होता है। |
| 3. इसमें वायु का अंत:छ्वासन तथा बाह्यछ्वासन होता है। | 3. इसमें ग्लूकोज़ का ऑक्सीकरण होता है जिससे ऊर्जा का विमोचन होता है। |

**तीन सामान्य छ्वासन ( फुफ्फुस ) दोष**

| | |
|---|---|
| दमा (Asthma) | छ्वास लेने में कठिनाई क्योंकि छ्वसनिकाएँ संकीर्ण हो गयी होती हैं। कभी-कभार पर्यावरण में पाए जाने वाले कुछ खास कारकों के कारण भी यह दोष हो जाता है। |
| निमोनिया (Pneumonia) | बैक्टीरिया के संक्रमण से फेफड़ों में छ्योथ हो जाता है। प्रकट लक्षण हैं- ज्वर, पीड़ा तथा बहुत ज्यादा खांसी। |
| क्षयरोग (Tuberculosis) | फेफड़ों के भीतर ऊतकों के पिंड से बन जाते हैं जो बैक्टीरिया के कारण बनते हैं। यह एक संक्रामक रोग है। अतिसीमा हो जाने पर खांसते समय खून आ जाता है। BCG के टीकाकारण से क्षय रोग से बचा जा सकता है |

**छ्वसन के दौरान अदलते-बदलते आयतन**

| | | |
|---|---|---|
| ज्वारीय आयतन (Tidal volume) | बिना किसी प्रकट प्रयास के (यानी सामान्य छ्वास लेने में) भीतर ले जायी जाने और बाहर निकाली जाने वाली वायु का आयतन | 300 मि.ली. |
| सर्वाधिछ्वास धारिता (Vital capacity) | उस वायु का आयतन जो गहरे से गहरे सांस लेने और अधिक से अधिक साँस छोड़ने में छ्यामिल है। | 400 मि.ली. |
| अवछ्योष आयतन (Residual volume) | उस वायु का आयतन जो अधिक से अधिक भींच कर सांस निकालने के बाद भी फेफड़ों में बची रह जाती है | 1000 मि.ली. से 1500 मि.ली तक |
| संपूर्ण फुफ्फुस धारिता (Total Lung Capacity) | सभी फुफ्फुस आयतनों का जोड़ (अधिकतम वायु जो किसी भी समय दोनों फेफड़ों में संग्रहित हो सकती है) | 5500 मि.ली. से 6000 मि.ली. |



Gupta Classes

धूम्रपान करने वालों तथा क्षयरोग से ग्रस्त व्यक्तियों में श्वासधारिता बहुत कम हो जाती है। इसके विपरित खिलाड़ियों तथा गायकों में यह धारिता बहुत बढ़ जाती है।

**मानव के श्वसन अंगों की संरचना और उनके प्रकार्य**

| अंग | संरचना | प्रकार्य |
|---|---|---|
| नासा द्वार (Nostrils) | नाक के छिद्र | अनचाहे कणों का छन जाना |
| नासागुहा (Nasal cavity) | श्लेष्मा झिल्ली एवं सिलिया से आवरित | धूल तथा बैक्टीरिया को फाँस लेते, वायु को गर्म एवं आर्द करते हैं। |
| ग्रसनी (Pharynx) | पेश्ठीय नली | श्वसन और पाचन दोनों तंत्रों के मार्ग बनाती है, परंतु पीछे के भाग में दोनों को पश्चक करने के लिए एक एपिग्लॉटिस होता है। |
| लैरिंक्स (Larynx) | एक कड़ा कक्ष जिसके भीतर स्वर-रज्जु होते हैं | ग्रसनी को श्वासनली के साथ जोड़ता है। |
| श्वासनली (Trachea) (वायु नली) | सी-आकृति के कार्टिलेजी वलयों द्वारा आलम्बित | श्वसनियों तक वायु का मार्ग, फेफड़ों में प्रवेश्ा |
| श्वसनी (Bronchus) (बहुवचन Bronchi) | प्रत्यास्थ सिलियायित तथा श्लेष्मी | फेफड़ों में श्वसनिकाओं के रूप में प्रवेश्ा |
| श्वसनिकाएँ (Bronchioles) | श्वसनी की छोटी अंतिम श्ााखाएँ | वायु को कूपिकाओं में पहुँचाती हैं। |
| कूपिकाएँ (Alveoli) (वायु कोश्ा air sacs) | इनमें रक्त कोश्ािकाएँ होती हैं | गैसों का विनिमय |

एपिग्लॉटिस (Epiglottis) एक पल्ले जैसी संरचना होती है जो वाल्व का कार्य करती है। खाना निगलते समय यह फेफड़ों की सुरक्षा करती है। *एपिग्लॉटिस निगले गए खाने को वायनली में जाने से रोकता है।*

# 6. पोषण

- जीवों द्वारा भोजन प्राप्त करने की प्रखिया को पोषण कह हैं।
- पोषण की दो विखियाँ होती हैं-

## 1. स्वपोषण (Autotrophic Nutrition)

- इसमें जीवखाारी सरल पदार्थों से भोजन का निर्माण करते हैं। ऐसे जीवखाारियों को स्वपोषी अथवा उत्पादक (Autotrophic & producer) कहते हैं। सभी हरे पौखो प्रकाश संश्लेषण द्वारा प्रकाश की उपस्थिति में जल व कार्बन डाइऑक्साइड क उपयोग करके पखियों में उपस्थित पर्णहरित (Chlorophyll) की सहायता से कार्बनिक पदार्थों का संश्लेषण करते ह
- यह दो प्रकार के होते हैं -

  (i) Photosynthetic (प्रकाश संश्लेषक)

  (ii) Chemosynthetic (रसायन-संश्लेषक)

## 2. परपोषण या विषमपोषण

**(Heterotrophic Nutrition)**

- वे जीवखाारी जो स्वयं प्रकाश संश्लेषण द्वारा भोजन निर्मा करने में असमर्थ होते हैं। वे भोज्य पदार्थों के लिए उ खोतों पर निर्भर होते हैं। ये **परपोषी** (Heterotrophs) कहलाते हैं।
- परपोषी दो प्रकार के होते हैं :-

अ) **मृतोपजीवी** (Saprophytes)- मृत शरीर से भोजन प्र करने वाले जीवखाारियों को मतोपजीवी (Saprophytes) कहते हैं, उदाहरण- कुकुरमुखाा (Mushroom), जो सड़ी पखियों पर उगता है तथा डबलरोटी फफंदी. दही में लैक्टोबेसि जीवाण।

ब) **परजीवी** (Parasites)- वे जीवखाारी जो अपने भोजन लिए दूसरे जीवखाारी पर आश्रित होते हैं उन्हें परजीवी कहते हैं। वे जीवखाारी जो पोषण प्रदान करते हैं, उन्हे **पोषी** (Host) कहते हैं. उदाहरण- मलेरिया परजीवी प्लाज्म (Plasmodium). टेपवर्म या फीताकृमि (Tapeworm). अमरबेल (Cuscuta)।

## पौखों में पोषण

- प्रकाश संश्लेषण की प्रखिया द्वारा पौखों में भोज्य पदार्थों का निर्माण होता है। परन्तु इसके अलावा इन्हें अन्य ख पदार्थों- जैसे नाइटखेट, सल्फेट, फॉस्फेट आदि की आवश्यकता होती है। ये पदार्थ अन्य कार्बनिक पदार्थ जैसे अमीनो अम्ल. प्रोटीन आदि बनाने में काम आते हैं। इस प्रकार अकार्बनिक खनिज पदार्थ, खनिज तत्वों से निर्मित है तथा पौखों द्व इनका अवशोषण खनिज पोषण (Mineral Nutrition) कहलाता है।
- विभिन्न तत्व पौखो के वृद्धि तथा प्रजनन के लिए आवश्यक हैं। इनकी कमी कोई अन्य चीज पूरा नहीं कर सकती। नीचे दी गई सारणी में पौखों में पाए जाने वाले तत्वों के कार्य तथा उनकी कमी से होने वाले लक्षणों का उल्लेख किया गया है।

## पौखो के लिए तत्वों के खोत

1. वातावरण से पौखों को $CO_2$ के रूप में C तथा O तत्व मिलते हैं।
2. जल के रूप H तथा O मिलते हैं।
3. पौखो मृदा से Cu, Mg, Fe, Mn आदि जडों द्वारा अवशोषित कर लेते हैं।
4. पौखों को न्यूक्लिक अम्ल, प्रोटीन बनाने के लिए नाइटजेजन की आवश्यकता होती है। पौखो इन्हें वायु से सीखो ग्रहण नहीं कर सकते, अतः कुछ पौखों में नाइटजेजन स्थिरीक जीवाण वायु में मौजूद $N_2$ को नाइटखेट ($NO_3^-$) तथा नाइटजइट ($NO_2^-$) तथा अमोनिया ($NH_4^+$) लवण में परिवर्तित करते हैं। पौखो इन्हें अवशोषित करने में समर्थ होते हैं।

## नाइटजेजन स्थिरीकरण

- लैग्यूमस (Legumes) फलीदार पौखों, जैसे- चना, मटर, मूंगफली आदि में नाइटजेजन स्थिरीकरण जीवाणु 'राइजोबि (Rhizobium) जड़ों में रहता है। यह नाइटजेजन स्थिरीकरण का कार्य करता है
- इसके अतिरिक्त नाइटजेसोमोनस (Nitrosomoas), एजेटोबेक्टर (Azotobacter), कुछ कवक व नील-हरित शैवाल भी $N_2$ स्थिरीकरण कर सकते हैं

- $N_2$ स्थिरीकरण के लिए नाइटजेजिनेज (Nitrogenase) नामक एन्जाइम की आवश्यकता होती है। इसकी मदद $N_2$ स्थिरीकरण जीवाणु $N_2$ को $NH_4^+$ में परिवर्तित करते हैं तथ $NH_4^+$ का ऑक्सीकरण के पश्चात् यह खमशः $NO_2^-$ तथ $NO_3^-$ में परिवर्तित होता है। $NH_4^+$ के ऑक्सीकरण के लिए नाइटजेसोमोनस तथा नाइटजेबेक्टर जीवाण की आवश्यक होती है।

**उदाहरण–**

नाइटजेसोमोनस

$NH_4^+$ (अमोनियम) —Oxidation→ $NO_2^-$ (नाइटजइट)

नाइटजेबैक्टर

$NO_2^-$ (नाइटजइट) —Oxidation→ $NO_3^-$ (नाइटज्ेट)

- उपरोक्त दोनों अभिखियाओं को संयक्त रूप से **नाइटजेजनीकरण** कहते हैं।

## पोषण से संबंखित कछ परिभाषाएँ

**( जन्तओं से संबंखित परिभाषा )**

**परजीवी**
- बाख परजीवी (Ectoparasite)
- अन्तः परजीवी (Endoparasite)

**बाख परजीवी** (Ectoparasite)

- बाख परजीवी, पोषी के शरीर में बाहर खपरी सतह पर रहते हैं. जैसे- जँ. खटमल।

**अन्तः परजीवी** (Endoparasite)

- ये पोषी के शरीर के अन्दर विद्यमान रहते हैं, य . कोशिका के भीतर रहते हैं तो अन्तः कोशिकीय परर्ज (Intra cellular parasite) तथा यदि ये कोशिका के बा खतक में रहते हैं. तो इन्हे अन्तराकोशिकीय परजीवी (Inter cellular parasite) कहते हैं, उदाहरण– प्लाज्मोडियम अन्तः परजीवी है तथा एन्टअमीबा अन्तराकोशिकीय परजीवी है

**फलभक्षी** (Frugivores)

- वे जन्तु जो केवल फलों को खाकर अपना जीवन नि करते हैं. जैसे– तोता

**रुखिाराहारी** (Sanguivores)

- वे जन्तु जो दूसरे जन्तुओं के रूखिार को चूसकर उसे भोजन स्वरूप ग्रहण करते ं. जैसे– जोंक या लीच।

**कीटभक्षी** (Insectivores)

- वे जन्तु जो केवल कीटों को खाते हैं. जैसे– मेंढक. टो स्पाइनी।

**मतभक्षी** (Carrion Eater)

- वे जन्तु जो केवल मृत जन्तुओं के माँस को खाकर जीवन-निर्वाह करते हैं. उन्हें मतभक्षी कहते हैं. जैसे– गिद्ध।

**स्वजातिभक्षी** (Cannibals)

- वे जन्तु जो अपनी ही जाति के जीवों के माँस को खाव जीवन-निर्वाह करते हैं. जैसे –कॉकरोच

**विष्ठाभोजी** (Coprophagous)

- खरगोश, खरहा आदि अपने ही मल को पुनः खाते हैं औ सेललोस का पर्ण पाचन कर पाने में समर्थ होते ं

## पादपों से संबंखित परिभाषाएं

**परजीवी पौखो** (Parasitic Plants)

- ये पौखो अपना भोजन दूसरे पौखों की कोशिकाओं से विशिष्ट अंगो, जिन्हे **चषकांग** (Haustoria) कहते हैं. द्वारा प्रा करते हैं।

**उदाहरण–**

अमरबेल, गंठवा, ये पर्ण परजीवी (Total parasite) हैं जो पूर्ण रूप से पोषी (Host) पर निर्भर करते हैं। चंदन, विस्कम, लोरेन्थस आंशिक परजीवी (Partial parasite) हैं ये पौखो जल तथा खनिज लवणों का पोषी की कोशिकाओं से अवशोषि करके अपना भोजन स्वयं बनाते ं

**सहजीवी पौखो** (Symbiotic plant)

- जब दो पौखो इस प्रकार से संबंखित रहते हैं कि . एक-दूसरे के लिए लाभकारी हो तो उसे सहजीवित कहते हैं तथा पौखों को सहजीवी पौखो कहते हैं।

**उदाहरण–**

लाइकेन (Lichens). यह कवक तथा शैवाल के बीच संबंख

स्थापित होने से बनता है। कवक, शैवाल के लिए खनि लवण तथा पानी अवशोषण करता है तथा शैवाल भ निर्माण करता है

- इसी प्रकार राइजोबियम जीवाणु तथा फलीदार पौखो जडों का संबंखा भी सहजीविता का उदाहरण

**कीटभक्षी पौखो** (Insectivorous Plants)

- ये पौखो $N_2$ की कमी वाले स्थान पर उगते हैं और ये इसकी कमी को पूरा करने के लिए कीटों का भक्षण करते हैं। इन्हें माँसाहारी पौखो भी कहते हैं. जैसे- डञेसेरा. डायोनिया. नेपेन्थीस आदि।

## प्रकाश संश्लेषण (Photosynthesis)

- हरे पादप तथा कुछ जीवाणु सूर्य की खर्जा को अवशोषि कर उसे रासायनिक रूप में बदलने में समर्थ होते है, जिससे शर्करा का संश्लेषण होता है। इस प्रखिया को संश्लेषण कहते हैं।
- प्रकाश संश्लेषण के लिए कच्चे माल के रू (i) पर्णहरित तथा $CO_2$ के अपचयन के लिए हाइडञेजन दाता की आवश्यकता होती है। (ii) पर्णहरित हरे रंग का वर्णक है, जो हरितलवक (Chloroplast) नामक कोशिकांगो में स्थित होता है। (iii) हरितलवक के दो भाग होते हैं पहला- (Grana) तथा दूसरा- स्टञेमा (Stroma)। ग्रेना में प्रका अभिखिया (ऑक्सीकरण) व स्टञेमा में रात्रिकालीन रसायनिक (अपचयन) खिया होती है।
- प्रकाश संश्लेषण प्रखिया में $CO_2$ का अपचयन (Reduction) होता है जिससे कार्बोहाइडञ्ट (Carbohydrate) बनता है $CO_2$ के अपचयन के लिए हाइडञेजन दाता की आवश्यकता होती है जिसकी पर्ति सल्खर जीवाण में $H_2S$ तथा पादपों मे $H_2O$ करता है।

**उदाहरण**

**सल्फर जीवाण में प्रकाश संश्लेषण की प्रखिया**

$$6CO_2+12H_2S \longrightarrow C_6H_{12}O_6+6H_2O+12S$$

**पादपों में प्रकाश संश्लेषण की प्रखिया**

$$6CO_2+12H_2O \longrightarrow C_6H_{12}O_6+6O_2\uparrow$$

## प्रकाश संश्लेषण की प्रखिया

- प्रकाश संश्लेषण की पर्ण प्रखिया दो चरणों में होती है
  1. प्रकाशिक अभिखिया (Light reaction)
  2. अप्रकाशिक अभिखिया (Dark reaction)

### 1. प्रकाशिक अभिखिया (Light reaction)

- यह अभिखिया ग्रेना (Grana) में संपन्न होती है। इस प्रखिया के दौरान कछ रासायनिक पदार्थ भाग लेते हैं जै $H_2O$. पर्णहरित ATP, NADP (Nicotinamide Adenine diphosphate) एक हाइडञेजन ग्राही पदार्थ है, जो हाइडञेजन ग्रहण करके $NADPH_2$ में परिवर्तित हो जाता है
- ATP कोशिकाओं में विभिन्न प्रखियाओं के बीच खर्जा समन्वय स्थापित करता है। जब खर्जा की आवश्यकता होती है ATP टूटकर ADP+P में परिवर्तित हो जाता है और इस संचित खर्जा इस्तेमाल के लिए मक्त हो जाती है

**जैसे** – $ATP \longrightarrow ADP + P$ + खर्जा

**प्रखिया** (Process)

- प्रकाशिक अवस्था के दौरान पर्णहरित तथा अन्य वर्णक जैसे कैरोटिन तथा जैन्थोखिल प्रकाश का अवशोषण करते जिसके कारण पर्णहरित के इलेक्टञॅन उखोजित हो जाते हैं और जब यह इलेक्टञॅन इस खर्जा को मुक्त करता है तो ADP में P जुड़कर ATP बनाता है। इसके अलावा उखोजित इलेक्टञॅनों द्वारा जल के अणओं का $H^+$ तथा $OH^-$ आयनों में अपघटन होता है।

$$4H_2O \longrightarrow 4H^+ + 4OH^-$$

- इनसे प्राप्त $H^+$ आयन को हाइडञेजन ग्राही पदार्थ NADP ग्रहण करता है तथा $NADPH_2$ में परिवर्तित हो जाता है। तथा $OH^-$ आयन संद्यनित होकर $H_2O$ तथा $O_2$ बनाते हैं
- इस प्रकार पूरी प्रकाशिक अभिखिया के दौरान ATP, $NADPH_2$, $O_2$ बनते हैं।

### 2. अप्रकाशिक अभिखिया (Dark reaction)

- यह प्रखिया हरित लवक के स्टञेमा भाग में होती है। इ प्रखिया के दौरान $CO_2$ का कार्बोहाइडञ्ट में अपचयन होता है और अपचयन में खर्जा के रूप में ATP तथा $NADPH_2$ का प्रयोग होता है जो अपचयन के लिए हाइडञेजन प्रदान करता है। इस प्रखिया को **कैल्विन चख** (Calvin Cycle) भी कहते हैं।

**सारांश**- प्रकाश अभिखिया में बन ATP तथा $NADPH_2$ अप्रकाशिक अभिखिया में $CO_2$ को कार्बोहाइडञ्ट में बदलने के काम आते हैं

## अमीबा में पोषण

- अमीबा में अंत: कोशिय पाचन होता है
- यह जल में प्लवित होने वाले सक्ष्मदर्शीय प्राणियों एवं पादपों को आहार बनाता है

**पोषण की विखिा**

- यह भक्षकाण खिया (Phagocytosis) विखिा द्रारा खाद्य ग्रहण करता है।
- अंतर्ग्रहण (Ingestion), पाचन (Digestion), स्वांगीकरण (Assimilation) एवं बहि:क्षेपण (Egestion) पोषण के विभिन्न चरण हैं।
- अमीबा कूटपाद (Pseudopodia) की संरचना कर खाद्य को ग्रहण करता है।

**टिडडे में पोषण** (Nutrition in Grass-hopper)

- शाकाहारी होते हैं।
- खाद्य ग्रहण करने के लिए अपने अग्रपाद (Forelegs) और मखांग का प्रयोग करते हैं
- पाचन तंत्र में अग्रांत्र (Foregut), मखयांत्र (Midgut) और पश्चांत्र (Hindgut) होते हैं।
- मखयांत्र के अग्र सिरे पर छ: जोड़ी लम्बवत ग्रंथियाँ उपस्थित होती है जिन्हे यखतीय अंखानाल (Hepatic Caeca) कहते हैं। यह आमाशय में खलता है
- **मैलपीजी नलिकाएं** (Malpighian tubules)- उत्सर्जी अंग हैं।

## मनष्य में पाचक तंत्र

**(Digestive System in Man)**

- मनष्य के पाचन तंत्र को दो भागों में बाँटा जाता :
  1. आहार नाल (Alimentary Canal)
  2. संबद्ध पाचन ग्रन्थियाँ (Associated Digestive Glands)

**1. आहार नाल के प्रमख भाग**

i) मख गहिका (Mouth cavity)

ii) ग्रास नली (Oesophagus or foodpipe)

iii) आमाशय (Stomach)

iv)**आँत** (Intestine)- छोटी आँत (Small Intestine). बडी आँत (Large Intestine)

- छोटी आँत का प्रारम्भिक भाग अंग्रेजी अक्षर 'U' की तरह मुड़ा रहता है। इसे **ग्रहणी** (Doudenum) कहते हैं। इस मोड पर अग्नाशय (Pancreas) पाया जाता है तथा पिखा वाहिनी (Bile duct) तथा अग्नाशय वाहिनी (Pancreas duct) मिलकर ग्रहणी में ही खलती है।
- **बड़ी आँत**– यह वहदान्त्र (Colon) तथा मलाशय (Rectum) में बँटा है।

**2. पाचन ग्रन्थियाँ**

i) **लार ग्रन्थियाँ** (Salivary Glands)- यह मख गहिका में लार खावित करने का काम करती है

ii) **यखत** (Liver)- इसमें पिखा (Bile) नामक रस बनता है जो पिखााशय (Gall bladder) में एकत्रित होता पिखााशय से पिखा वाहिनी (Bile duct) ग्रहणी में खलती है। इसका pH 7.7 होता है।

iii) **अग्नाशय** (Pancreas)- इससे अग्नाशय रस निकलत है। अग्नाशयी नलिका भी ग्रहण (Duodenum) में खुलती है। अग्नाशय रस का pH (क्षारीय) 7.6 से 7.8 होता है।

## मनष्य में पाचन खिया

**(Process of Digestion)**

- मुख गुहिका में उपस्थित लार ग्रन्थियों का लार भोजन मिल जाता है तथा इसमें उपस्थित एमाइलेज या टाई एंजाइम मांड (स्टार्च) को माल्टोज या सुखोस में परिवर्तित करता है और माल्टेज या सखोस एंजाइम माल्टोज ग्लकोस में बदलता है
- लार से खावित लाइसोजाइम एन्जाइम **भोजन में उपस्थित जीवाणओं** को मार देता है
- आमाशय (Stomach) में जठर ग्रन्थियों (Gastric glands) द्वारा जठर रस निकलता है जिसमें. पेप्सिन, रेनिन तथा जठर लाइपेज, पाये जाते हैं, साथ HCl भी निकलता क्योंकि जठर रस के एंजाइम अम्लीय माखयम में कार्य करने में सक्षम होते हैं।
- HCl का मुख्य कार्य जठर रस में उपस्थित अखिय एन्जाइम को सखिय एन्जाइम में बदलना

## अमाशय के एंजाइम के कार्य

**1. पेप्सिन**

पेप्सिन

प्रोटीन प्रोटियोसेस + पेप्टोन्स तथा पॉलिपेप्टाइड
एंजाइम

**2. दग्धा प्रोटीन ( केसीन ) की खिया**

HCl activater

i) प्रोरेनिन (inactive) रेनिन (active)

gastic renin

ii) केसीन पेराकेसिन+ कैल्सियम पेराकेसिनेट

प्रोटियोसेस पेप्टोन्स

पाली पेप्टाइडस अमीनो अम्ल

**3. आमाशयी लाइपेज**

- आमाशय में अम्लीय माखयम होता है जबकि लाइपेज क्षारीय माखयम में कार्य करता है इसलिए वसा का पर्ण पाचन ग्रहणी में अग्नाशयी लाइपेज द्वारा होता है

जठर लाइपेस

चर्बी (Fat) चर्बी के छोटे-छोटे कण में बदलना
(Emulsion)

- आमाशय से काइम नामक गाढा पदार्थ उत्सर्जित होता है जो भोजन के मंथन से बनता है
- इसके पश्चात भोजन इलियम में पहुँचता है जहाँ इसे **काइल** (Chyle) कहा जाता है. यहीं आन्त्ररस (Intestinal juice) निकलता है
- आन्त्ररस में पाए जाने वाले एन्जाइम तथा उनके कार्य

**1. डरेप्सिन**

पेप्टोन+प्रोटीन अमीनो अम्ल

**2. माल्टोस**

माल्टेस ग्लकोस

**3. इन्वर्टेस**

शक्कर ग्लकोस

**4. लैक्टोस**

लैक्टोस ग्लैक्टोस
आर्जिनेज

5. आर्जीनीन अमीनो अम्ल यरिया

- छोटी आँत में स्थित सूक्ष्मांकुरों (Villi) द्वारा कोशिकाएं पदार्थों को अवशोषित कर लेती है तथा उन्हें रुधिार व लसीका मे पहँचा देती है।
- बिना पचा काइल बड़ी आँत में जाता है। यहाँ पानी अवशोषण होता है। शेष मल के रूप में मलाशय (Rectum) में एकत्रित होकर गदा (Anus) द्वारा बाहर निकल जाता है

Gupta Classes

# 7. उत्सर्जन

- ष्ठारीर के विभिन्न कोष्ठिकाओं में जैव रासायनिक क्रियाएँ होती रहती हैं, जिससे अपष्ठिष्ट पदार्थ बनते हैं, अपष्ठिष्ट पदार्थ का अधिक मात्रा में एकत्रित होना ष्ठारीर के लिए हानिकारक होता है।
- हानिकारक अपष्ठिष्ट पदार्थ की अधिक मात्रा को ष्ठारीर से निष्कासित करने के जैविक प्रक्रम को **उत्सर्जन** (Excretion) कहते हैं।
- ष्ठारीर में जल की उचित मात्रा तथा उपयुक्त आयनों का संतुलन बनाए रखना परासरण-नियमन (Osmo-regulation) कहलाता है।
- उत्सर्जन तथा परासरण-नियमन दोनों साथ-साथ चलते हैं। इन्हें सम्पादित करने वाले अंगतंत्र को मूत्र-तंत्र या उत्सर्जन तंत्र कहते हैं।

## प्राणियों में उत्सर्जन

**(Excretion in Animal)**

- अमीबा तथा अन्य एक कोष्ठिकीय प्राणियों में संकुचनष्ठील रिक्तिका (Contractile vacuole) उत्सर्जन तथा परासरण-नियमन का कार्य करती है।
- स्पंज (Sponges) और Cnidaria (नाइडेरिया Ex-हाइड्रा) में अपष्ठिष्ट पदार्थ क्रमष्ठा: ऑस्कुलम एवं मुखद्वार (Oral opening) द्वारा विसरित होती है।
- चपटे कृमियों (Flat worm) में उत्सर्जन की इकाई एक कोष्ठिकीय होती है जिन्हें **ज्वाला कोशिका** (Flame cell) कहते हैं।
- उच्चतर जंतुओं में विभिन्न नलिकाकार संरचनाएं उत्सर्जन अंग बनाती है।
- केचुएं (Earthworm) में नलिकाकार संरचनाएं **वष्ठ्क** (Nephridia) कहलाती है।
- मनुष्य में सूक्ष्म और बारीक नलिकाएं होती है जिसे **वक्काणु** (नेफ्रान) कहते हैं।
- मनुष्य में दो वष्ठ्क होते हैं तथा प्रत्येक वष्ठ्क में लगभग 10 लाख वष्ठ्काणु (नेफ्रान) होते हैं।
- प्रोटोजोआ तथा अकोष्ठिकीय जीव में उत्सर्जन अंग नहीं होते। उत्सर्जी पदार्थ विसरण द्वारा प्लाज्मा झिल्ली (Plasma membrane) से होकर निष्कासित होता है।
- आर्थोपोडा जन्तुओं में उत्सर्जन भिन्न प्रकार से होता है,

**उदाहरण-**

- पेलिमोन जो क्रेस्टेष्ठिया वर्ग का जन्तु है, में हरित ग्रंथि द्वारा उत्सर्जन होता है।
- कॉकरोच जो कीट वर्ग में है, में उत्सर्जन अंग मैल्पीघि नलिकाओं (Manphigian tubes) द्वारा होता है।

## उत्सर्जी पदार्थों के आधार पर जन्तुओं का वर्गीकरण

**अ) अमोनोटेलिक** (Ammonetelic)

- इन जन्तुओं का उत्सर्जी पदार्थ मुख्यत: अति विषैली **अमोनिया** है, उदाहरण- कुछ मछलियाँ, सभी प्रोटोजोआ, पेरीफेरा अन्य अकष्ठेरूकी उभयचर (Amphibian)

**ख) यूरिकोटेलिक** (Uricotelic)

- मुख्य उत्सर्जी पदार्थ कम विषैला **यूरिक अम्ल** है, उदाहरण – सरीसष्ठ, पक्षी (Aves) तथा कीट
- जल में अघुलनष्ठील, ठोस अथवा अर्द्धठोस स्वरूप

**स) यूरिओटेलिक**

- मुख्य उत्सर्जी पदार्थ यूरिया है, उदाहरण- स्तनियों, केंचुओं, घड़ियाल कुल के सदस्यों में।

| उत्सर्जी अंग | उत्सर्जी पदार्थ |
|---|---|
| वष्ठ्क (Kidney) | नाइट्रोजनी पदार्थ। |
| त्वचा (Skin) | स्वेद ग्रंथियाँ द्वारा पानी यूरिया एवं अन्य लवण। |
| फुप्फुस (Lungs) | $CO_2$ |
| आँत (Intestine) | इनकी परत कुछ लवणों का उत्सर्जन करती है, जो मल के साथ बाहर निकल जाते हैं। |
| यकृत (Liver) | नाइट्रोजनी पदार्थों को निष्कासित करने में सहायक। |

## मनुष्य में उत्सर्जन

- मनुष्य का उत्सर्जन तंत्र उदरगुहा (Abdomen) में स्थित होता है।
- इसमें सेम के बीज की आकृति के दो वृक्क होते हैं। प्रत्येक से एक वाहिनी निकलती है जिसे मूत्र वाहिनी कहते हैं। मूत्राशय में एकत्रित मूत्र मूत्रमार्ग द्वारा शरीर से बाहर निष्कासित हो जाता है।
- उत्सर्जन हेतु प्रत्येक वृक्क लाखों इकाईयों का बना होता है जिसे **वक्क नलिकाए** (Nephron) कहते हैं। यह वृक्क की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई है। यह आंशिक रूप से वृक्क मेडुला और वृक्क कार्टेक्स में स्थित होता है।
- प्रत्येक वृक्क नलिका का ऊपरी सिरा एक प्याले की आकार की रचना बनाती है जिसे **बोमन संपट** (Bowman's capsule) कहते हैं।
- बोमन संपुट में रूधिर वाहिनियों का सघन गुच्छा होता है इसलिए इसे कोशिका गुच्छ (Glomerulus) भी कहते हैं। यह Filtration (छनने) का कार्य करता है।
- ये कोशिकाएं वृक्क में आने वाली उस धमनी के विभाजन से बनती है जिसमें अवशिष्ट पदार्थ युक्त रुधिर प्रवाहित होता है।
- बोमन संपुट वृक्क नलिका का प्रवेश द्वार है।
- वृक्क धमनी (Renal arteries) द्वारा अपशिष्ट पदार्थ वृक्क में आते हैं।
- कोशिका गुच्छ की कोशिकाओं से रूधिर का तरल भाग छनकर बोमन संपुट में आता है जैसे-जैसे यह वृक्क नलिका में प्रवाहित होता है ग्लूकोज एवं एमीनो अम्ल लवण आदि जैसे उपयोगी पदार्थ वृक्क नलिका के चारों ओर बने कोशिका जाल द्वारा पुनः अवशोषित हो जाते हैं।
- वृक्क नलिकाएं अपशिष्ट पदार्थों को वृक्क के भीतरी भाग में प्रवाहित कर देती हैं जहाँ से यह मूत्राशय तक चला जाता है। मूत्र त्यागने तक यह मूत्राशय में एकत्रित रहता है।
- मनुष्य के मूत्र में मुख्यतः यूरिया, कुछ मात्रा में यूरिक अम्ल, अकार्बनिक लवण तथा जल होता है।

### मूत्र निर्माण

नेफ्रॉन उत्सर्जी तथा परासरण नियमन प्रकार्यों को तीन चरणों में पूरा करते हैं:

(i) परानिस्पंदन (Ultrafiltration)

(ii) चयनात्मक पुनःअवशोषण (Selective reabsorption)

(iii) नलिकीय स्रवण (Tubular secretion)

## डायालिसिस ( अपोहन )

- संक्रमण, आघात, रुधिर प्रवाह में अवरोध के कारण वृक्क निष्क्रिय हो सकते हैं। ऐसी अवस्था में रूधिर में अपशिष्ट पदार्थों का निस्पंदन करने, उसमें जल तथा आयन की पर्याप्त मात्रा बनाए रखने आदि के लिए कृत्रिम वृक्क नामक उपकरण का प्रयोग किया जाता है, जो डायालिसिस (Dialysis) नामक तकनीक पर आधारित होती है।
- किसी अन्य व्यक्ति के सुमेलित वृक्क का, रोगी के शरीर में प्रत्यारोपण (Transplant) भी किया जा सकता है।
- डायालिसिस के नियम अपोहन के उपकरण में सेल्युलोज की लम्बी कुंडलित नलियाँ अपोहन विलयन से भरी टंकी में लगी होती है। यह रुधिर इन नलियों से प्रवाहित होता है तब अपशिष्ट पदार्थ विसरित होकर टंकी के विलयन में आ जाता है। स्वच्छ रुधिर रोगी के शरीर में पुनः प्रविष्ट करा दिया जाता है।

Gupta Classes

# 8. जन्तुओं में परिवहन

- जन्तुओं में पचे हुए पोषक पदार्थों तथा श्वासनांगो द्वारा वातावरण से ग्रहण की गई ऑक्सीजन को समस्त कोशिकाओं में पहुँचाने के लिए परिसंचरण तंत्र (Circulatory system) होता है।
- रोगजनकों का विनाश करके शरीर की सुरक्षा करना।
- परिसंचरण तंत्र कोशिकाओं से $CO_2$ को श्वसनांगो में तथा यूरिया आदि को उत्सर्जी अंग वृक्क (Kidney) तक पहुँचाता है।
- हार्मोनों का अभिगमन।
- शरीर की विभिन्न कोशिकाओं के बीच रासायनिक आदान-प्रदान भी परिसंचरण तंत्र द्वारा होता है।
- ऊष्मा का समान वितरण।
- परिसंचरण तंत्र दो भागों में विभक्त है:
  - i) रुधिर परिसंचरण तंत्र (Blood Circulatory system)
  - ii) लसीका तंत्र (Lymphatic system)

## रुधिर परिसंचरण तंत्र

**(Blood Circulatory System)**

- परिवहन तंत्र में तीन पदार्थों की आवश्यकता होती है-

i) भ्रमण करने वाले द्रव (रुधिर)

ii) संकुचनशील अंग जिसके द्वारा द्रव्य को समस्त शरीर में भेजा जा सके (रुधिर वाहिनी या हृदय)

iii) नलिका जिसमें होकर रुधिर शरीर के प्रत्येक भाग में भ्रमण करता है, उदाहरण- धमनी, शिरा।

### रुधिर वाहिनी (Blood vessels)

- यह रूधिर को हृदय से अंगो की ओर ले जाती है तथा ऊतकों से रूधिर को लेकर हृदय की ओर ले जाती है।

**रुधिर वाहिनी के प्रकार**

i) **धमनी** (Arteries)- वह रुधिर वाहिनी जो रुधिर को हृदय से अंगो की ओर ले जाती है उसे धमनी कहते हैं।

ii) इसमें ऑक्सीजनयुक्त रक्त प्रवाहित होता है।

iii) पुफ्फुस धमनी एक मात्र धमनी है जिसमें विऑक्सीजन रक्त बहता है।

iv) **धमनिका** (Arterioles)- धमनियों की महीन शाखाएँ धमनिका कहलाती है।

v) **रुखिार केशिकाएं** (Blood capillaries)- धमनिकाएं अनेक महीन शाखाओं में बँट जाती है जो ऊतकों की कोशिकाओं के बीच स्थित होती है, रूधिर केशिकाएं कहलाती है।

vi) **लघ शिराएं** (Venule)- रुधिर केशिकाएं ऊतक के भीतर पुनः जुड़कर कुछ बड़ी वाहिनियों का निर्माण करती है, इन्हें लघुशिरा कहते हैं।

vii) **शिराएं** (Veins)-

(i) लघुशिराएं आपस में मिलकर शिराएं बनाती है जो रूधिर को ऊतकों से लेकर हृदय की ओर ले जाती है।

(ii) इनमें अशुद्ध रक्त बहता है।

(iii) फुफ्फुस शिरा एकमात्र शिरा है जिसमें शुद्ध रक्त बहता है।

**परिवहन तंत्र के प्रकार**

- उच्च श्रेणी के अकशेरुकियों तथा कशेरूकियों में दो प्रकार का परिवहन तंत्र होता है:
  - i) खुला परिवहन तंत्र (Open circulatory system)
  - ii) बन्द परिवहन तंत्र (Closed circulatory system)
- बन्द परिवहन तंत्र, खुले परिवहन तंत्र से अधिक विकसित है। खुला परिवहन तंत्र अधिकांश आर्थोपोडा संघ (उदाहरण- कॉकरोच, तिलचट्टा आदि) के जन्तुओं में पाया जाता है तथा बंद परिवहन तंत्र मनुष्य व सभी कशेरूकियों में पाया जाता है।

## परिवहन तंत्र का जन्तुओं में विकास

**(Development of transport system in animals)**

i) **प्रोटोजोआ** संघ के जन्तु अकोशिकीय जन्तु हैं। इसमें परिवहन तंत्र नहीं होता। इसका जीवद्रव्य तरल रूप में एक कोशिकीय शरीर में भ्रमण करता है। जिसे **प्रवाही गति** कहते हैं। पैरामिशियम में यह साइक्लोसिस कहलाता है।

ii) **स्पंजो** में नाल तंत्र (Canal system) पाया जाता है जिसमें परिवहन तंत्र जल धारा के रूप में होता है। यह अल्प विकसित बाह्य परिसंचरण तंत्र है।

iii) **चपटे कृमियों** की देह भित्ति बहुत पतली होने के कारण इनके ष्ठारीर की सतह से विसरण द्वारा पदार्थों का वातावरण से आदान प्रदान होता है। (उदाहरण- Tapeworm, liver fluke)

iv) **ऐनेलिडा** संघ के जन्तुओं में निम्न श्रेणी का बन्द प्रकार का परिवहन तंत्र होता है जिसके फलस्वरूप रूधिर केवल धमनियों तथा ष्ठिराओं में बहता है। इनमें रूधिर कणिकाएं नहीं होती। इन कृमियों में 7-11 खण्ड में पाँच जोड़ी कूट हृदय पाये जाते हैं। इसका रूधिर लाल होता है क्योंकि इसमें हीमोग्लोबिन पाया जाता है, उदाहरण- केंचुआ, जोंक, नेरीस।

v) **आर्थोपोडा** संघ के जन्तुओं में परिवहन खुले प्रकार का पाया जाता है। इसमें गैसों का आदान-प्रदान **ट्रेकियल** तंत्र से होता है। इसका रूधिर रंगहीन होता है। इनके रूधिर में हीमोग्लोबिन के बजाय **हीमोसायनिन** (Haemocyanin) पाया जाता है, उदाहरण- कॉकरोच आदि।

vi) **निम्न कष्ठेरूकियों** में हृदय एक नलिका के रूप में होता हैं जिसमें आलिन्द (Atrium or Auricle) तथा निलय (Rentricle) नहीं होता। स्कांलियोडान मछली में हृदय एक नलिका के रूप में होता है। यह साइनस वेनोसस (Sinus venosus), ऐट्रियम (Atrium), निलय (Rentricle) और कोनस आर्टीरियोसिस (Conus Arteriosis) के रूप में होता है, उदाहरण- मेंढक।

vii) **Amphibians** के हृदय में तीन वेष्ठम (Chamber) होते हैं। इसमें दायां आलिन्द तथा बायां आलिन्द एवं निलय होते हैं। इसमें ऑक्सीकृत व अनॉक्सीकृत रूधिर मिश्रित होते हैं।

viii) **सरीसष्ठों (Reptiles)** में भी तीन वेष्ठम होते हैं परन्तु घड़ियाल (क्रोकोडाइल) में चार वेष्ठम दो आलिन्द तथा दो निलय होते हैं।

ix) **पक्षियों (Birds)** तथा स्तनियों (Mammals) में भी चार वेष्ठम, दो आलिन्द तथा दो निलय होते हैं।

## मानव हृदय तथा मानव में रुधिर परिसंचरण

**(Human Heart and Circulation of Blood in Human)**

- मानव हृदय चार कोष्ठीय अंग है। ऊपर वाले दो कोष्ठ आलिन्द (Auricle) तथा नीचे वाले दो कोष्ठ निलय (Ventricle) कहलाते हैं। मानव हृदय, हृदय पट के कारण दो भागों में विभक्त है– दायां तथा बांया भाग। हृदय के दांयी तरफ से अनॉक्सीकृत रूधिर का परिवहन होता है और बांयी ओर से आक्सीकृत रुधिर का परिवहन होता है। दोनों प्रकार के रुधिर कभी भी मिश्रित नहीं होते इसलिए इसे **दोहरा परिसंचरण तंत्र** कहते हैं।

**प्रक्रिया** (Process)

i) हृदय का दाहिना आलिंद अनॉक्सीकृत रूधिर, ष्ठारीर के विभिन्न भागों से अग्र-पष्ठच महाष्ठिरा द्वारा प्राप्त करता है। इसके पष्ठचात रूधिर दांये आंलिद से दांये निलय में एक छिद्र द्वारा पहुँचता है जिस पर वाल्व होते हैं। जो रूधिर को विपरीत दिष्ठा में बहने से रोकता है। दांये निलय से रूधिर फुप्फुसीय धमनी द्वारा फेफड़ों तक जाता है, जहाँ पर यह रूधिर ऑक्सीकृत होता है।

ii) हृदय के बायें आलिंद में फुप्फुसीय ष्ठिरा से ऑक्सीकृत रुधिर पहुँचता है। बाएं आलिंद से यह रूधिर बाएं निलय में एक छिद्र द्वारा पहुँचता है जिस पर वाल्व लगे होते हैं। यह आक्सीकृत रूधिर बाएं निलय से सिस्टेमिक महाधमनी द्वारा ष्ठारीर के विभिन्न अंगो में भेजा जाता है।

- हृदय एक पम्प की भाँति कार्य करता है। हृदय विष्ठोष प्रकार के ऊतक का बना होता है। जिसे हृदय पेष्ठीय ऊतक (Cardiac muscular tissue) कहते हैं। हृदय की पम्पिंग क्रिया उसकी पेष्ठीयुक्त भित्तियों के संकुचन द्वारा होती है। आलिंद तथा निलय बारी-बारी से संकुचित होते हैं। संकुचन को **सिस्टोल** (Systole) कहा जाता है तथा ष्ठिथिलन को **डायस्टोल** (Relaxation or Diastole) कहा जाता है।
- आलिन्दों का संकुचन (Contraction), आलिन्दों की दीवार पर पाये जाने वाले S.A. Node (Sinuauricular node) के कारण होता है। अत: यह आलिन्दो के संकुचन के लिए उत्तरदायी है। इसे हृदय का **पेस मेकर** (Pace maker) भी कहते हैं।
- निलय के संकुचन के लिए A.V Node (Artioventricular node) उत्तरदायी होता है। इसके उद्दीपन के लिए भी S.A Node उत्तरदायी है।

महाष्ठिराएँ (Venae cavae)

(रक्त को देह ऊतकों से लाती हैं जिसमें ऑक्सीजन न के बराबर होती है)

↓

दाहिना एटिञ्यम (Right atrium)

↓

त्रिवलन वाल्व (Tricuspid valve)

↓

दाहिना निलय (Right ventricle)

↓

फखफस धामनियाँ (Pulmonary arteries)

(रक्त को फेफड़ों में ले जाती हैं जहाँ रक्त में से $CO_2$ निकल जाती और ऑक्सीजन प्राप्त कर ली जाती है)

↓

फुफ्फुस शिराएँ (Pulmonary veins)

(ऑक्सीजनित रक्त को वापिस हृदय में ले जाती हैं)

↓

बायाँ एट्रियम (Left atrium)

↓

द्विवलन वाल्व (Bicuspid valve)

↓

बायाँ निलय (Left ventricle)

↓

महाधमनी (Aorta)

(ऑक्सीजन से लदे रक्त को शरीर में पहुँचाती है)

## हृदय ध्वनि (Heart sound)

- हृदय ध्वनियों में लब (Lubb) नामक प्रथम ध्वनि तब उत्पन्न होती है जब आलिन्द तथा निलय के बीच के कपाट या वाल्व बन्द होते हैं तथा इसी क्षण निलयों (Ventricles) का संकुचन होता है।
- हृदय ध्वनियों में डब (Dubb) नामक दूसरी ध्वनि तब उत्पन्न होती है जब अर्द्धचन्द्राकार कपाट बन्द होते हैं। ये वे वाल्व हैं जो निलय तथा महाधमनियों के बीच होते हैं। कपाट व वाल्व रूधिर को विपरीत दिष्ठा में बहने से रोकते हैं।

1. RBCs की अधिकता (सामान्य से ज्यादा) पोलीसाइथीमिया (Polycythemia)
2. RBCs की कमी (सामान्य से कम) रक्ताल्पता (Anaemia)
3. WBCs की अधिकता (सामान्य से अधिक) ल्यूकीमिया (Leukemia)
4. WBCs की कमी (सामान्य से कम) ल्यूकोपीनिया (Leukopenia)

## हृदय रोग (Heart diseases)

- **हृदय में कपाटीय** रोग, वाल्व के ठीक प्रकार से कार्य करने में असमर्थ होने से होता है। इसमें रूधिर विपरीत दिष्ठा में जाने लगता है।
- **एन्जाइना** हृदय रोग, भित्ति को ठीक तरीके से रूधिर प्राप्त नहीं होने के कारण होता है। यह कोरोनरी धमनी के संकुचन या उसमें थक्का जमने से होता है।
- **पेरिकार्डियोटिस** (Pericardiotis)– मानव हृदय, एक आवरण से घिरा रहता है। इस आवरण की परतों में एक द्रव भरा रहता है जिसे पेरिकार्डियल द्रव कहते हैं। इस रोग में जीवाणु के संक्रमण के कारण हृदय आवरण में सूजन आ जाती है।
- **रूमैटीक** हृदय रोग जीवाणु संक्रमण के कारण हृदय के कपाट ठीक से कार्य नहीं कर पाते और हृदय की पेष्ठियाँ कमजोर हो जाती हैं।

## उपकरण (Instruments)

- स्फिग्नोमैनोमीटर – रक्त-दाब मापने का यंत्र।
- स्टैथेस्कोप के द्वारा हम हृदय की ध्वनि सुन सकते हैं।
- इलैक्ट्रोकार्डियोग्राम (ECG) उपकरण से हृदय की गतिविधि मापी जाती है। यह आवेगों को एक ग्राफ कागज द्वारा हृदय गति की अनियमितता को व्यक्त करता है।

## स्तनियों में परिसंचरण तंत्र

**(Circulatory system in mammals)**

- स्तनियों के हृदय में चार वेष्ठम होते हैं।
- दो आलिन्द (Auricle) और दो निलय (Ventricle)

**परिसंचारी तरल - रक्त और लसीका**

**रक्त समूह (Blood Groups)**

ABO प्रणाली में रक्त को रासायनिक दृष्टि से चार समूहों A, B, AB तथा O में रखा जाता है।

व्यक्ति का रक्त समूह आजीवन एक ही बना रहता है। वे रक्त समूह RBCs की झिल्ली के ऊपर कुछ खास प्रोटीनों के मौजूद होने के कारण होते है। इन पर ऐंटीजान A, B या A और B दोनों ऐंटीजेन (Antigen) हो सकते हैं अथवा इनमें से कोई भी नहीं मौजूद हो सकता है। इसी आधार पर चार रक्त वर्ग है –

- A, B, AB तथा O
- 'O' वर्ग को सार्वजनिक दाता कहा जाता है। यह सभी को

रक्तदान कर सकते है।

- 'AB' वर्ग को सार्वजनिक प्रापक (Universal Recepient) कहते है। इस रक्त वर्ग में कोई भी एंटी बॉडी नहीं होते, यह सभी वर्गों से रक्त प्राप्त कर सकते है।

**Rh कारक (Rh factor)**

ABO रक्त समूहों के अतिरिक्त एक और रक्त प्रोटीन होता है जिसके मौजूद होने या मौजूद न होने के आधाार पर व्यक्ति $Rh^+$ अथवा $Rh^-$ होता है। यह कारक सर्वप्रथम रीसस (Rhesus) बंदर में देखा गया था।

$Rh^-$ व्यक्ति $Rh^+$ व्यक्ति का रक्त प्राप्त नहीं कर सकता।

गभवती मताओं में कभी-कभी Rh कारक से समस्या आ खड़ी होती है। ऐसे $Rh^+$ भ्रूण का रक्त जिसकी माँ Rh हो गुच्छन के गंभीर खतरे में होता है। भ्रूण की $Rh^+$ रक्त कोष्ठिकाओं के प्रति माँ के ष्ठारीर में ऐंटीबॉडी बन जाते है। अतः दूसरे गर्भधारण के समय ष्ठिष्ठु की मष्ठ्यु संभव होती है।

**लसीका तंत्र** (Lymphatic system)

कुछ महत्वपूर्ण घटक जैसे कि प्रोटीन आदि जो अंतर्कोष्ठिकीय तरल से वापस रक्त में नहीं जा सके वे लिम्फ (लसीका) के रूप में इस तंत्र में ले लिए जाते है और इसके द्वारा गर्दन के निचले हिस्से में ष्ठिराओं में छोड़ दिए जोते हैं। लसीका को रूपांतरित ऊतक तरल माना जा सकता है।

लसीका (लिम्फ) एक स्वच्छ, रंगहीन तरल होता है जो रक्त केष्ठिकाओं की दीवारों से बाहर आ जाता और तमाम ऊतक गुहाओं को तर किए रहता है।

**लसीका के प्रकार्य**

1. यह उन भागों में जहाँ रक्त नहीं पहुँच सकता, पोषण एवं ऑक्सीजन की आपूर्त्ति करता है।
2. कोष्ठिका बाह्य गुहाओं में से अधिष्ठेष ऊतक तरल को वापिस रक्त में ले आता है।
3. छोटी आंत में से वसाओं को अवष्ठेषित कर उनका अभिगमन करता है।
4. नाइट्रोजनी अपष्ठिष्टों को एकत्रित करता है।
5. इसमें मौजूद लिम्फोसाइट (लसीकाणु) एवं ऐंटीबॉडी, बैक्टीरिया को समाप्त करने में सहायता करते हैं।

लसीका तंत्र में बहुसंख्यक लसीका वाहिनियाँ. लसीका पर्व (Lymph nodes) तथा लसीका वाहिकाएँ होती हैं। इस तंत्र में कोई पंप करने वाला हृदय नहीं होता। यह तरल पेष्ठी-गतियों के द्वारा धक्का दिए जाकर प्रवाहित किया जाता है।

लसीका पर्व सारे ष्ठारीर में फैली होती हैं। ये खास तौर से गर्दन, बगलों तथा जांघों में केंद्रित होती हैं।

**लसीका पर्व** (Lymph nodes)

प्रत्येक लसीका पर्व एक गुच्छानुमा ऊतक होता है। जिसके भीतर अनेक लिम्फोसाइट (लसीकाणु) विद्यमान होते हैं। ये पर्व छलनी जैसा कार्य करते हैं जिसमें वे बैक्टीरिया, वाइरस कणों तथा कैंसर-कोष्ठिकाओं को छानते-हटाते जाते हैं।

**प्लीहा** (तिल्ली) (Spleen)

यह सबसे बड़ा लसीका अंग है और इसके निम्नलिखित कार्य हैं

- रक्तोत्पत्ति - रक्त कोष्ठिकाओं का बनना
- पुरानी पड़ गई और घिसी-पिटी रक्त कोष्ठिकाओं को नष्ट करना
- रक्त का आकार
- बैक्टीरिया को अंतर्ग्रहित करके सुरक्षा प्रदान करना।

# 9. तंत्रिका तंत्र और अंत:स्त्रावी तंत्र

- तंत्रिकातंत्र शरीर के विभिन्न अंगो पर कई प्रकार से नियंत्रण करता है, जैसे-
  - i) यह जन्तु को बाहरी वातावरण के अनुसार प्रतिक्रिया करने में मदद करता है।
  - ii) यह समस्त मानसिक कार्यों का नियंत्रण करता है।
  - iii) यह विभिन्न अंगों की भिन्न-भिन्न क्रियाओं को संचालित एवं नियंत्रित करता है।
- विभिन्न जैविक क्रियाओं के नियंत्रण एवं समन्वयन का कार्य एक अन्य अंग तंत्र द्वारा होता है, जिसे अंत:स्त्रावी या हार्मोन तंत्र कहते हैं।
- बहुकोष्ठीय जीवों के शरीर में विभिन्न कार्यों का नियंत्रण तथा समन्वय करने के लिए विशिष्ट कोशिकाएं पाई जाती हैं जिसे **तंत्रिकोशिका** (Neuron) कहते हैं। यह तंत्रिकातंत्र की रचनात्मक एवं कार्यात्मक इकाई है।

**तंत्रिका ऊतक की संरचना**

- इस कोशिका के डेड्राँन संकेतों (आवेगों) को संवेदी अंगों से अथवा अन्य तंत्रिका-कोशिका के ऐक्सॉन से अपनी कोशिका के ऐक्सॉन द्वारा अपनी कोशिका में पहुँचाते हैं।
- एक लंबा तंतु (ऐक्सॉन) आवेग को कोशिका-काय से ऐक्सॉन की अंत्य शाखाओं में पहुँचाता है और फिर इन शाखाओं से आवेग या तो अगली तंत्रिका-कोशिका में पहुँचा दिया जाता है या किसी प्रभावकारी संरचना (पेशी अथवा ग्रंथि) में पहुँचा दिया जाता है जो तदुपरांत आदेश का पालन करते हुए या तो संकुंचन या स्राव का विमोचन करती है।
- कुछ न्यूरॉनों के ऐक्सॉन बहुत लंबे (1.3 मीटर तक) हो सकते हैं।
- कभी-कभी ऐक्सॉन के ऊपर वसा पदार्थ (मायेलिन) का एक आवरण चढ़ा होता है। इस प्रकार के तंतुओं को मायेलिनित अथवा मेडुलेटेड तंतु कहते हैं और वे आवेगों को अधिक तेजी से आगे को बढ़ाते हैं। अधिसंख्य अकशेरुकियों में ये तंतु अमायेलिनित (मायेलिन आच्छद से रहित) होते हैं।
- तंत्रिका (Nerve) तंत्रिका तंतुओं (ऐक्सॉनों) का एक बंडल होती है, जो एक नलिकाकार आवरण के भीतर बंद हुए रहते हैं।
- तंत्रिका के भीतर का प्रत्येक तंत्रिका-तंतु अपनी ही पक्ष्माक् तंत्रिका-कोशिका का जारी हुआ भाग होता है। ये तंत्रिकाएं केंद्रीय तंत्रिका-तंत्र (मस्तिष्क एवं मेरुरज्जु) को शरीर के अन्य भाग के साथ जोड़े रखती हैं।

## प्राणियों में समन्वय

- हाइड्रा (जो एक नीडेरियन है) में तंत्रिका कोशिकाएं पाई जाती हैं, जो शरीर में एक तंत्रिका जाल बनाती है।
- उच्च श्रेणी के अकेशरूकियों में, जैसे- कीटों में तंत्रिका तंत्र पूर्ण विकसित होता है। इनमें एक द्विपालित (Bilobed) तंत्रिका पुंज (मस्तिष्क), तंत्रिका रज्जु (Nerve cord) तथा तथा तंत्रिका गुच्छ पाये जाते हैं।
- कशेरूकियों में तंत्रिका तंत्र के तीन भाग होते हैं:
  - i) **केन्खीय तंत्रिका तंत्र** (Central nervous system)- इसमें मस्तिष्क तथा मेरूरज्जु आते हैं।
  - ii) **परिखाीय तंत्रिका तंत्र** (Peripheral nervous system)- इसमें क्रेनियल तथा स्पाइनल तन्त्रिकाएं आती हैं।
  - iii) **स्वायखा तंत्रिका तंत्र** (Autonomous nervous system)- यह मस्तिष्क एवं मेरूरज्जु से संबंधित है। परन्तु यह स्वतंत्र रूप से कार्य करता है और यह शरीर की अनैच्छिक क्रियाओं को नियंत्रित करता है, जैसे- हृदय की गति।

## केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र

**(Central Nervous System)**

- मस्तिष्क एवं मेरूरज्जु इसके भाग है।

### मस्तिष्क (Brain)

- मानव मस्तिष्क का भार लगभग 1350 g होता है।
- यह क्रेनियम में बन्द रहता है।
- मस्तिष्क तीन झिल्लियों से ढ़का रहता है:
  - i) दृढ़तानिका (Duramatler)
  - ii) जालतानिका (Arachnoid)
  - iii) मृदुतानिका (Piamatler)

- इन झिल्लियों के बीच पाये जाने वाले द्रव को सेरिब्रोस्पाइनल द्रव (Cereprosphinal fluid) कहते हैं। यह मस्तिष्क को आघातों से बचाता है। मेनिनजाइटिस (Meningitis) नामक घातक रोग मस्तिष्क झिल्ली में सूजन आने से होता है।

## मस्तिष्क की संरचना (Structure of Brain)

- मानव मस्तिष्क को निम्न भागों में बाँट सकते हैं:

  i) अग्र मस्तिष्क (Prosencephalon)

  ii) मध्य मस्तिष्क (Mesencephalon)

  iii) पष्ठच मस्तिष्क (Rhombencephalon)

## 1. अग्रमस्तिष्क

- यह दो भागों से बना होता है।

  i) सेरीब्रम ii) डाइएनसिफेलॉन

i) **सेरीब्रम** (Cerebrum)- यह मस्तिष्क का कुल 2/3 भाग बनाता है।

**सेरीब्रम के कार्य**- यह बुद्धिमता और यादाष्तत का केन्द्र है। यह सचेतन संवेदनाओं, इच्छाष्ताक्ति, ऐच्छिक गतियों, स्मष्ति, ज्ञान, वाणी एवं चिन्तन का भी केन्द्र है। ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त प्रेरणाओं का इसमें विष्ठलेषण व समन्वय होता है।

ii) **डाइएनसिफेलॉन** के दो भाग हैं:

- **थैलेमस**- यह दर्द, ठण्डा तथा गर्म पहचानने का कार्य करता है।
- **हाइपोथैलेमस**- यह अन्त:स्रावी ग्रन्थियों से स्रावित होने वाले हार्मोन्स का नियंत्रण करती है। पोस्टीरियर पिट्यूटरी (पीयूष ग्रन्थि) से स्रावित होने वाले हार्मोन्स हाइपोथैलेमस द्वारा स्रावित होते हैं। यह समस्थापक (homeostasis) का नियंत्रक है।
- यह भूख, प्यास, ताप नियंत्रण, प्यार, घष्टा के केन्द्र हैं तथा वसा एवं कार्बोहाइड्रेट का उपापचय पर भी नियंत्रण करते हैं। पसीना, गुस्सा, खुष्ठी आदि इसके नियंत्रण में हैं।

## 2. मध्य मस्तिष्क

- यह सेरीब्रम को सेरीबेलेम से जोड़ता है। इसका भाग, सेरीब्रम पेडन्कल (क्रूरा सेरेब्री) तंतुओं का बंडल है जो सेरीब्रम को मस्तिष्क के अन्य भागों से जोड़ता है। मध्य मस्तिष्क के दोनों भाग दष्टि एवं श्रवण उद्दीपन को ग्रहण करते हैं।

## 3. पष्ठचमस्तिष्क

- इसके दो भाग हैं :–

  i) सेरीबेलम; ii) मेड्यूला ऑब्लोगेटा

- **सेरीबेलम**- इसका का मुख्य कार्य ष्ठारीर का संतुलन बनाए रखना है। इसका कार्य ष्ठारीर की पेष्ठियों के टोन का नियमन करना तथा ऐच्छिक पेष्ठियों के संकुचन पर नियंत्रण करना है। यह आन्तरिक कर्ण के संतुलन भाग से संवेदनाएं ग्रहण करता है।
- **मेड्यूला ऑब्लोगेटा**- यह मस्तिष्क का सबसे पीछे का भाग है। यह पॉन्सवरोली तथा मेरूरज्जु (Spinal cord) के मध्य स्थित रहता है।
- यह उपापचय, रक्तदाब, आहार नाल के संकुंचन (Peristalsis), ग्रन्थि स्राव तथा हृदय की धड़कन का नियंत्रण करता है।

## मेरूरज्जु (Spinal cord)

- यह पतली, लंबी एवं बेलनाकार संरचना है जो कष्ठेरूका दंड की केनाल (Canal) में रहती है। मस्तिष्क की तरह इसमें भी तीन झिल्लियाँ तथा सेरीब्रोस्पाइनल द्रव (Cerebrospinal fluid) पाया जाता है।

**मेरूरज्जु के कार्य**

- यह उद्दीपन के प्रति अनैच्छिक अनुक्रिया (Involuntary action) के लिए उत्तरदायी है।

**प्रतिवर्ती खिया** (Reflex action)

- किसी सुई के चुभने अथवा गर्म या ठंडे पदार्थों को छूने पर हम तुरंत अपने हाथों को हटाते हैं। किसी उद्दीपन के प्रति इस प्रकार की अचानक होने वाली अभिक्रिया अनैच्छिक होती है, कार्यकारी अंगों (पेष्ठियों और ग्रंथियों) का किसी उद्दीपन के प्रति अचेतन एवं अनैच्छिक अभिक्रिया को प्रतिवर्ती क्रिया कहते हैं, उदाहरण- आँखों की पलकों का झपकना, जलती हुई मोमबत्ती से हाथ पीछे हटाना, खाँसी, छींक, उबासी लेना।
- प्रतिवर्ती क्रिया के पथ को प्रतिवर्ती चाप (Reflex arc) कहते हैं। प्रतिवर्ती क्रिया का नियंत्रण मेरूरज्जु द्वारा होता है।
- प्राकृतिक प्रतिवर्त - प्राकृतिक प्रतिवर्त उसे कहते हैं जिसमें पहले के किसी अनुभव अथवा ष्ठिक्षण की आवष्ठयकता नहीं होती। ये प्रतिवर्त जनकों से वंष्ठानुगत रूप में प्राप्त हुए होते हैं। इनके कुछ सामान्य उदाहरण इस प्रकार है- (i) जब कोई वस्तु अचानक आँख के पास को आती है तो पलकों का जल्दी से बन्द हो जाना।

(ii) जब कभी निगलने पर खाना गलत तरीके से सांस की

नली में चला जाए तो धसका लगना।

(iii) ष्ठिष्ठु का मुट्ठी मे जकड़ने का प्रतिवर्त (grasping relfex)

- अनुकूली (Conditioned) प्रतिवर्त – अनुभव के द्वारा अर्जित होते हैं। किसी स्वादिष्ट भोजन को देखकर मुंह में पानी आ जाना।
- रूसी जीव वैज्ञानिक पैवलोव (Pavlov) पहला व्यक्ति था जिसने कुत्ते में अनुकूली प्रतिवर्त को वैज्ञानिक विधि से प्रदर्ष्ठित किया।

## परिधीय तंत्रिका तंत्र

**(Peripheral Nervous System)**

- इसके अन्तर्गत वे सभी तंत्रिकाएं (Nerves) आती हैं जो मस्तिष्क तथा मेरूरज्जु से निकलती हैं। मस्तिष्क से निकलने वाली तंत्रिकाओं को कपालीय या **क्रेनियल तंत्रिकाएं** (Cranial Nerves) कहते हैं तथा मेरूरज्जु से निकलने वाली तंत्रिकाएं को **स्पाइनल तंत्रिकाएं** (Spinal Nerves) कहते हैं।
- कपाल तंत्रिका की 12 जोड़ी, मस्तिष्क से निकलती हैं।
- मेरूरज्जु से 31 जोड़ी मेरूरज्जु तंत्रिकाएं निकलती हैं।
- ये तंत्रिकाएं तीन प्रकार की होती हैं:

i) **संवेदी तंत्रिकाएं** (Sensory nerves)– ये तंत्रिकाएं उद्दीपनों की सूचनाओं को अर्थात् संवेदनाओं को संवेदांगो (Sense organ) से केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र तक पहुँचाती हैं।

ii) **चालक तंत्रिकाएं** (Motor nerves)– ये तंत्रिकाएं संवेदनाओं को केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र से अपवाहक अंग (Effector organ) तक पहुँचाती है।

iii) **मिश्रित तंत्रिकाएं** (Mixed nerves)– ये तन्त्रिकाएं संवेदी तंत्रिकाओं तथा चालक तंत्रिकाओं दोनों का ही कार्य करती हैं।

## स्वायत्त तंत्रिका तंत्र

**(Autonomic Nervous System)**

- इसका केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र से घनिष्ठ संबंध है और यह ष्ठारीर के विभिन्न अंगो, जैसे हृदय, रूधिर वाहिनियों, फेफड़े, आमाष्ठाय, गर्भाष्ठाय, मूत्राष्ठाय तथा समस्त प्रकार की ग्रन्थियों (नलिका ग्रन्थियों Exocrine glands तथा नलिकाविहीन ग्रन्थियों Endocrine glands) के कार्यों और उनकी सक्रियता पर नियंत्रण करता है। हमारी इच्छा का इस तंत्रिका तंत्र पर कोई नियंत्रण नहीं होता और इसके सभी कार्य अनैच्छिक (Involuntary) हैं।
- उदाहरण– आमाष्ठाय की पेष्ठियों का संकुचन, हृदय की धड़कन का तेज तथा मन्द होना, सांस का तेज तथा मन्द होना, पसीने का कम या अधिक स्राव होना, प्रसन्नता का आभास होना।
- स्वायत्त तंत्रिका तंत्र दो प्रकार का होता है:

i) अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र (Sympathetic system)

ii) परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र (Parasympathetic system)

- इनमें से एक यदि किसी कार्य का उद्दीपन करता है तो दूसरा उसका अवरोध, जैसे– अनुकम्पी तंत्र हृदय स्पंदन तेज करता तथा परानुकम्पी इसे मंद करता है।

## अंत:स्रावी तंत्र

**(Hormonal or Endocrine system)**

- हार्मोन वे रासायनिक पदार्थ हैं जो अल्पमात्रा में विष्ठिष्ट ऊतकों द्वारा स्रावित होते हैं जिन्हें अन्त:स्रावी ग्रन्थियां कहते हैं। अंत:स्रावी ग्रन्थियों में अपने स्रावित हार्मोन का वहन नलिकाओं द्वारा नहीं होता इसलिए इन्हें नलिकाविहीन ग्रन्थियां कहते हैं।
- हार्मोन सीधे रक्त में प्रवेष्ठा करते हैं तथा रक्त परिवहन द्वारा ले जाए जाते हैं। ये विष्ठिष्ट ऊतक/अंग पर क्रिया करते हैं। अंत:स्रावी ग्रन्थियां ष्ठारीर के विभिन्न भाग में स्थित हैं।

### विभिन्न अंत:स्रावी ग्रन्थियां

- **हाइपोथैलमस**– मस्तिष्क का वह भाग है, इसमें धूसर द्रव्य (Gray matter) के बहुत से पिंड हैं, जो पीयूष ग्रंथियों को नियंत्रित करते हैं। ये रुधिर में बहुत से हार्मोन स्रावित करते हैं, जिन्हें **न्यरोहार्मोन** कहते हैं।

### थायराइड ग्रन्थि (Thyroid gland)

- **ष्ठ्वासनली** के पास स्थित होता है। यह **सबसे बड़ी** अंत:स्रावी ग्रंथि है। इसमें सबसे अधिक आयोडिन की मात्रा होती है।
- यह संयोजी ऊतक की पतली अनुप्रस्थ पट्टी से जुड़ी होती है जिसे Isthmus कहते हैं।
- इससे स्रावित होने वाले **विभिन्न हार्मोन** निम्न लिखित हैं।

### थाइरॉक्सीन ($T_4$)

- यह मुख्यत: अमीनो अम्ल है जिसमें 60% आयोडिन (Iodine) होता है।

**इसके कार्य**

1. यह मनुष्य की सभी उपापयची क्रियाओं का नियंत्रण करता है, इसलिए इसे अंतस्त्रावी तंत्र का **पेसमेकर** (Pacemaker of the endocrine system) कहते हैं।
2. यह हृदय स्पंदन की दर को प्रभावित कर ष्ठारीर के तापक्रम को नियंत्रित करता है।
3. थाइरॉक्सिन उभयचरों के टैडपोल में कायान्तरण (Metamorphosis) को प्रेरित व नियंत्रित करता है। इसकी कमी से लार्वा व्यस्क में रूपान्तरित नहीं होते हैं। इस प्रक्रिया को नियोटेनी (Neoteny) या पीडोजेनेसिस (Paedogenesis) कहते हैं।

## थाइरॉक्सीन एवं रोग

1. **हाइपोथाइरॉडिज्म**- थाइरॉक्सीन मुख्यत: आयोडीन होता है, इसकी कमी से निम्न रोग हो जाते हैं–

i) **जड मानवता** (Cretinism)- बच्चे बौने, मानसिक रूप से अल्पविकसित।

ii) **हाशीमोटो रोग** (Hashimoto's disease)- इसमें दी जाने वाली दवाएँ एवं स्वयं हार्मोन भी विष का कार्य करने लगती है। ये ग्रंथि को भी नष्ट कर देते हैं।

iii) **सामान्य घेंघा** (Simple goitre)- इस रोग में थाइरॉइड ग्रंथि के आकार में बहुत वष्द्धि हो जाती है जिससे गर्दन फूल जाती है।

2. **हाइपर थाइरॉइडिज्म** (Hyperhyroidism)- थाइराक्सिन के अत्यधिक स्त्राव से यह रोग होता है, इसमें हृदय का स्पंदन बढ़ जाता है, जिससे घबराहट, थकावट, चिड़चिड़ापन आ जाता है। इसका प्रभाव निम्न है–

i) **ग्रेब्स रोग–** थाइरॉइड ग्रंथि बढ़ जाती है।

ii) **प्लमर रोग–** थाइरॉइड ग्रंथि में गाँठे बनने लगता है।

## पैराथायरॉइड ग्रंथियां

**(Parathroid Glands)**

- यह दो जोड़ी होती हैं, एवं थायरॉइड ग्रंथि में पष्ष्ठ सतह पर धँसी रहती हैं, कोष्ठिकाओं के समूह द्वारा निर्मित होते हैं जिसके मध्य अत्यधिक रक्त कोष्ठिकाएं उपस्थित होती हैं।

### स्त्रावित हार्मोन

i) **पैराथार्मोन** (Paratharmone)- यह हार्मोन कैल्ष्टायम के अवष्ठोषण एवं वष्क्क में इसके पुनरावष्ठोषण (Reabsorption) को बढ़ाता है। यह हड्डियों की वष्द्धि एवं दांतों के निर्माण पर नियंत्रण करता है।

ii) **कैल्सिटोनिन हार्मोन**- यह पैराथॉर्मोन के विपरीत कार्य करता है। यह हड्डियों के विघटन को कम करता है तथा मूत्र में कैल्ष्टायम का उत्सर्जन बढ़ाता है।

**उत्पन्न रोग**

क) **हाइपो पैराथाइरॉइडिज्म**- इसमें पैराथार्मोन का स्त्रावण अत्यधिक कम हो जाता है, जिसके फलस्वरूप निम्न रोग होते हैं- टेटनी, हाइपोकैल्सीमिया।

ख) **हाइपर पैराथायरॉइडिज्म**- पैराथायरॉइड ग्रंथि ट्यूमर के कारण अत्यधिक बढ़ जाती है, जिससे हार्मोन का अधिक स्त्राव होने लगता है, इसके कारण गुर्दे की पत्थरी आदि रोग होते हैं।

## पीयूष या पिट्यूटरी ग्रंथि

**(Pituitary Gland)**

- यह मस्तिष्क में स्थित होता है। इस ग्रंथि के मुख्य तीन भाग होते हैं–
  - i) अग्रपिण्डक (Anterior lobe)
  - ii) मध्यपिण्डक (Intermediate lobe)
  - iii) पष्ठचपिण्डक (Posterior lobe)

### 1. अग्रपिण्डक

- इसके द्वारा स्त्रावित सभी हार्मोन प्रोटीन के बने होते हैं।

**मख्य हार्मोन**

i) **वृद्धि हार्मोन** (Growth or Somatotropic harmone)- यह शरीर वृद्धि में सहायक होते हैं। यह शरीर में प्रोटीन संश्लेषण, कोशिका विभाजन तथा वसा के विघट (Lipolysis) में सहायक होते हैं।

**STH के अल्पखाव से उत्पन्न रोग**

- **बौनापन या मिजेट्स**- वाल्यावस्था में, मानसिक रूप विकसित लेकिन लम्बाई में वृद्धि नहीं, ये नपुंसक या बांझ होते हैं। इस प्रकार के बौनेपन को एंटीलियोसिस कहते हैं
- **सांडमण्ड रोग**- प्रौढावस्था में. समय से पहले बढापा आना।

**STH के अत्यखिाक खाव से उत्पन्न रोग**

- **महाकायता** (Gigantism)- वाल्यावस्था में/कोशिकाओं

अमीनों अम्ल का बढ़ जाना. जिससे हडिडयों के सिरों प अखि-प्रवर्खी उपास्थियां (Epiphyseal cartilages) काफी समय तक अस्थियों में नहीं बदलती है जिससे अस्थियां लम्बी हो जाती हैं. इसे महाकायता कहते हैं

ii) **लैक्टोजनिक हार्मोन** (Lactogenic Harmone-LTH)- यह हार्मोन स्तन वृद्धि एवं दूखा के निर्माण व खाव को प्रे करता है। इसकी कमी से दखा का खाव नहीं होता।

## 2. मखय पिण्ड द्वारा खावित हार्मोन

- इससे केवल एक हार्मोन निकलता है जिसे मिलेनोसाइट प्रेरक हार्मोन (Melenocyte stimulating harmone-MSH) कहत हैं। यह मिलेनिन का मात्रा को कशेरूकियों में नियंत्रित रखता है।
- निम्न जन्तओं एवं पक्षियों में यह हार्मोन मिलेनिन (Melanin). रंग (Pigment) के कणों को फैलाकर त्वचा के रंग प्रभावित करता है इसी कारण त्वचा रंगीन हो जाती है। मनुष्य में यह हार्मोन चकखो और तिल (Moles) पडने को प्रेरित करता है

## 3. पश्च पिण्ड द्वारा खावित हार्मोन

- इससे दो हार्मोन निकलते हैं

i) **वेसोप्रेसिन**- यह मुख्यत: पालीपेप्टाइड होता है। यह शरीर में जल संतुलन में सहायक होता है इसलिए इसको Antidiuretic कहा जाता है।

ii) **ऑक्सीटासिन या पाइटोसीन**- ये पॉलीपेप्टाइड्स है त गर्भाशय की अरेखित पेशियों में सिकुड़न पैदा करते जिससे प्रसव पीड़ा उत्पन्न होती व स्तन से दखा खाव में भी सहायक होता है।

- पीयूष ग्रंथि को Master gland कहा जाता है, क्योंकि अन्य अंत:खावी ग्रंथियों के खाव को यही नियंत्रण करता है

## एडजेनल ग्रंथियां (Adrenal Glands)

- यह ग्रंथि प्रत्येक वक्क के खपरी सिरे पर अंदर की अ स्थित होता है
- एडजेनल ग्रंथि के दो भाग होते हैं–

(i) कोर्टेक्स (Cortex), (ii) मेडला (Medulla)

## कोर्टेक्स द्वारा खावित हार्मोन

- कोर्टेक्स द्वारा लगभग 45-50 हार्मोन बनते हैं। इनमें मख्यत: 6-7 हार्मोन ही सखिय हैं।

1. **ग्लूकोकोर्टी क्वायड** (Glucocorticoids)- यह हार्मो कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा के उपापचय का नियंत्रण करते हैं। ये शरीर में RBC की संख्या को बढ़ाते हैं तथा श्वे रुखिराणओं (WBC) को नियंत्रित करते हैं।
2. **मिनरेलो कोर्टिक्वायडस** (Mineralo Corticoids)- ये हार्मोन शरीर में खनिज आयनों की मात्रा का नियंत्रण करते हैं
3. **एडजेनल लिंग हार्मोन** (Adernal Sex Harmone)- यह हार्मोन पेशियों तथा हड्डियों के परिवर्द्धन, बाल के उगने तथा यौन आचरण को नियंत्रित करता है ये हार्मोन मुख्यत: नर हार्मोन एन्डजेजन तथा मादा हार्मोन एस्टजेजन्स होते हैं। नर हार्मोन में मुख्य डीहाइडजे- एपीऐन्डजेस्टेरोन होता है। स्त्रियों में इ हार्मोन की अखिकता से चेहरे पर बाल बढने लगते हैं। इस प्रखिया को एडजेनल विरिलिज्म कहते हैं।

## मेडला द्वारा खावित हार्मोन

i) **एडजेनेलीन**- यह हार्मोन खोखा, डर, मानसिक तनाव की अवस्था में अत्यखिक खावित होने लगता है।

## एडजेनल एवं रोग

### क ) अल्प खावण

i) **एडीसन रोग** (Addison disease)

- रूखिर दाब घट जाता है।
- निर्जलीकरण हो जाता है
- त्वचा पर चकखो पडते हैं।

ii) **कॉन्स रोग** (Conn's disease)

- यह रोग सोडियम एवं पोटैशियम की कमी से होता है पेशियों में अकडन हो जाती है।

### ख ) अतिखावण

i) **कशिंग रोग** (Cushing disease)

- इस रोग में शरीर में जल तथा सोडियम का जमाव अखिक हो जाता है।

ii) **एडजेनल विरिलिज्म** (Adrenal virilism)

- इस रोग में स्त्रियों में पुरुषों के लक्षण आने लगते हैं स्त्रियं के चेहरों पर दाढ़ी. मूँछ आने लगती हैं

## थाइमस ग्रंथि (Thymus Gland)



Gupta Classes

- यह ग्रंथि वक्ष में खदय से आगे स्थित होता है तथा वद्धावस्था में लप्त हो जाती है
- यह शरीर में लिम्फोसाइट (Lymphocytes) कोशिकाएं बनाने में सहायक होती है।
- ये शरीर में एण्टीबॉडी (Antibody) बनाकर शरीर में सरक्षा तंत्र को स्थापित करने में सहायक होती है

## लैंगर हैन्स द्वीप

**(Islets of Langerhans)**

- शरीर में अग्न्याशय (Pancreas) एक मिश्रित ग्रंथि (Mixed gland) है इसमें अन्तखाव एवं बर्हि:खाव दोनों होता है। इन्हीं में बिखरी हुई असंख्य सूक्ष्म कोशिकाओं के गच्छे पाये जाते हैं जिसे लैंगर हैन्स द्वीप कहते हैं
- इनमें तीन तरह की कोशिकाएं पायी जाती है
  - i) α–कोशिकाएं (Alpha cell)
  - ii) β–कोशिकाएं (Beta cell)
  - iii) δ–कोशिकाएं (Delta cell)
- इससे निम्न हार्मोन्स का खावण होता है:

## इन्सलिन (Insullin)

- Beta cell से खावित. मख्यत: प्रोटीन
- यह ग्लूकोज में ग्लाइकोजन के परिवर्तन की दर को पेशियो तथा यखत में काफी बढा देता है
- यह शर्करा एवं वसा निर्माण में भी सहायक होता है । प्रोटीन संश्लेषण को प्रेरित करता है
- इन्सुलिन के अल्पखाव से मखुमेह या डाइबीटीज होता जिससे ग्लूकोज मात्रा बढने लगती है। मत्र में जल की मात्रा बढ जाती है।

## अतिखावण

- हाइपोग्लाइसीमिया (Hypoglycemia) आदि रोग होते हैं जिससे मस्तिष्क में उखोजना बढ़ जाती है, थकावट आती है। मछ और ऐंठन से मत्य भी हो सकती है
- **ग्लुकैगान** (Glucagon)– यह इन्सुलिन के विपरीत क करता है अर्थात् शरीर में ग्लूकोज की मात्रा कम होने ग्लाइकोजन को ग्लकोज में बदलता है
- **सोमेटोस्टेनिन** (Somatostanin)– यह एक पॉलीपेप्टाइड है यह पचित भोजन के स्वांगीकरण की अवखिा बढाता है।

### गोनाड ( जनन ग्रंथियाँ. वषण और अंडाशय )

शखाणु और अंडाणु उत्पन्न करने के अतिरिक्त, वृषण अंडाशय कुछेक हॉर्मोनों का खाव करते हैं जिन्हें ः हॉर्मोन कहते हैं। इन हार्मोनों का प्रभाव वय:संधि के समः सुस्पष्ट होता है जबकि द्वितीयक सैक्स लक्षण प्रकट हो आरंभ होते हैं

**नर में –**

- सबसे सामान्य एंडजेजन टेस्टोस्टेरॉन (testosterone) है जो नर–लक्षणों के विकास को उखीपित करता है

**मादा में –**

- अंडाशय दो प्रकार के हॉर्मोन उत्पन्न करता है– ईस्टजेः (Oestrogen) और प्रोजेस्टेरॉन (Progesteron)।

**ईस्डजेजन :** इनका खाव अंडाशय की पूरक कोशिकाओं से होता है। एक परिपक्व स्त्री में ईस्टजेजन निषेचित अंडाणु गर्भाशय की भिखिा में अंत: स्थापित होने के लिए उसव भिखिा को तैयार करता है।

**प्रोजेस्टेरॉन :** इसका खाव कॉर्पस ल्यूटियम (corpus luteum) से होता है। इससे गर्भाशय में होने वाले वे सभी अंतिम परिवर्तन होते हैं जो गर्भावथा को बनाए रखने के लिए और गर्भास्ः के भीतर भ्रण की वद्धि के लिए आवश्यक है

### फेरोमोन : सामाजिक स्तर के संदेशवाहक रसायन

फेरोमोन (फेरिन–धारण करने वाला, मोन – हॉर्मोन का खाव होते हैं जो एक व्य खावित करते हैं किंत वे प्रभाव दसरे व्यष्टि जीव पर डालते हैं।

फेरोमोनों के कछ उदाहरण इस प्रकार हैं

- सामान्य चीटियाँ फर्श पर या दीवार पर एक ऐसे अदृश्य मार्ग पर चलती हैं जिसे यात्रा कर रही चींटियों के शरी निकलने वाले एक खाव से तैयार किया गया होता है
- विक्षुब्ध मधु–मक्खियाँ अपने डंक और मेन्डिबल से ए संकट–सूचना देने वाले फ़ेरोमोन निकालती हैं ताकि कॉलोर्न के सभी सदस्य आखमण का सामना करने के लिए सतः हो जाएँ।

### संवेदी अंग ( ग्राही ) (Sense Organs)

सभी संवेदी अंगों में विष्ठिष्ट संवेदी कोष्ठिकाएँ होती हैं जो उद्दीपनों को प्राप्त करके उन्हें संबद्ध तंत्रिकाओ के द्वारा मस्तिष्क तक पहूँचाती हैं। मस्तिष्क के भीतर आवेग छांटे

जाते तथा उनका अर्थ निकाला जाता है ताकि सही अनुक्रिया हो सके।

**आँख** –

आँखें जिनके द्वारा आप देखते हैं हमारे ष्टारीर का एक सुरक्षित अंग होती हैं। जब कभी आप प्याज़ काटतें होते है तो क्या होता है? इसी प्रकार जब ऑखों में धूँआ जाता या धूल के कण गिर जाते हैं तो क्या होता है आपकी आँखों में पानी आ जाता है। जब कोई रोता है तब भी ये ही ऑसु आँखों में आते हैं। आँखों का पानी अथवा आँसू अश्रु ग्रंथियों से निकलते है, इन ग्रंथियों को लैक्रिमल ग्रंथियाँ (lacrimal glands) भी कहते हैं। अश्रु-ग्रंथियों अक्षिकोटर के ऊपरी पाष्ठर्व भगों में स्थित होती है तथा उनके निकलने वाली 6-12 वाहिनियाँ स्रावों को आँख की सामने की सतह पर निकलती है जिससे स्नेहन (Lubrication) हो जाता है और ध ोने की क्रिया से आँख साफ भी हो जाती है। आँसूओं में रोगाणुरोधी गुण पाया जाता है।

**आँख की संरचना**

नेत्र गोलक तीन ऊतक परतों का बना होता है –

1. स्क्लेरा (Sclera) - सबसे बाहर की कड़ी सफेद परत। सामने की ओर यह पारदर्ष्ाी कॉर्निया का रूप ले लेती है।
2. कोरॉइड (Choroid) - बीच की परत जो रक्त वाहिकाओं से भरी होती है। सामने की ओर इसी का आइरिस (iris) (परितारिका) बना जाता है, यह आइरिस गहरे रंग का गोल भाग होता है जो कार्निया में से दिखाई पड़ता है। इसके केंद्र पर एक बिन्दु होता है जिसे तारा या प्यूपिल (pupil) कहते हैं।
3. रेटिना (Retina) - सबसे भीतरी संवेदी परत रेटिना में दो प्रकार की संवेदी कोष्ठिकाएँ होती है - ष्ठालाकाएँ (rodes) (ये ध ीमें प्रकाष्ठा के लिए संवेदी होती हैं) तथा ष्ठांकु (cones) (ये रंगों के लिए संवेदी होती हैं)। पीत-बिंदु (yellow spot), जो दष्टि अक्ष पर स्थित होता है वह स्थान है जहाँ सामान्य आँख में सबसे अच्छा दिखाई पड़ता है। इसमें संवेदी कोष्ठिकाएँ और उनमें भी विष्ठोषकर ष्ठांकु कोष्ठिकाएँ सर्वाधिक संख्या में पायी जाती हैं। ष्ठोष रेटिना मे ष्ठालाकाएँ अधिक तथा ष्ठांकु कोष्ठिकाएँ कम होती है।

- पीत बिंदु के तुरंत नीचे अंध बिंदु (blind spot) होता है। यह वह स्थान है जहाँ पर रेटिना की समस्त संवेदी कोष्ठिकाओं से आने वाले तंत्रिका-तंतु एक साथ अभिसष्ठ होकर दष्ठ-तंत्रिका (Optic nerve) बनाते है, यहीं से यह तंत्रिका नेत्र गोलक से बाहर की ओर निकलती है। अंध बिंदु पर कोई संवेदी कोष्ठिकाएँ नहीं होतीं और इसलिए इस बिंदु पर दिखायी नहीं पड़ता (अर्थात इस पर पड़ने वाला प्रतिबिंब का अंष्ठा अनुभव नहीं किया जा सकता)।

लेन्स उभयोत्तल (biconvex) होता है। यह प्यूपिल के पीछे निलंबन स्नायुओं (suspensory ligaments) के द्वारा सधाया रखा जाता है। जलीय तरल (aquous humour) जिसे नेत्रोद भी कहते हैं। एक पानी जैसा तरल होता है जो कॉर्निया तथा लेन्स के बीच की जगह मे भरा रहता है। लेन्स के पीछे एक जेली जैसा स्वच्छ पदार्थ काचाभ तरल (vitreous humour) भरा होता है।

आइरिस (परितारिका) लेन्स के आगे बना हुआ एक गोल वर्णकयुक्त पर्दा सा होता है जो भूरा, काला या नीला होता है। इसमे वष्ठाकार पेष्ठियाँ (प्यूपिल को संकरा करने के लिए) और अरीय पेष्ठियाँ (प्यूपिल को चौड़ा करने के लिए) होती है। प्यूपिल का साइज अनैच्छिक रूप में कम-ज्यादा किया जाता रहता है ताकि ऑख में प्रवेष्ठा करने वाले प्रकाष्ठा की मात्रा को नियंत्रित किया जा सके। क्या आप सोच सकते हैं कि प्यूपिल कब-कब चौड़ा हो जाता और कब-कब संकरा हो जाता है?

**हम किस प्रकार देखते हैं** –

- वस्तु से परावर्तित प्रकाष्ठा किरणें पारदर्ष्ाी सरंचनाओं में से होकर ऑख में प्रवेष्ठा करती हैं, यानी कंजंक्टाइवा, कॉर्निया, जलीय तरल, लेन्स तथा काचाभ तरल मे से होकर।
- कॉर्निया की वक्रता से किरणें कुछ हद तक मुड़ जाती हैं, और लेन्स उन्हें और ज्यादा मोड देता है जिससे एक प्रतिबिंब रेटिना के ऊपर बन जाता है।
- प्रतिबिंब उल्टा एवं वास्तविक होता है।
- प्रतिबिंब की प्रकाष्ठा ऊर्जा संवेदी कोष्ठिकाओं (ष्ठालाकाओं तथा ष्ठांकुओं) में रासायनिक परिवर्तन पैदा करती है।

इन परिवर्तनों से तंत्रिका-आवेग बनते हैं जो दष्ठ तंत्रिका में से चलते जाते हुए मस्तिष्क में पहुँचते हैं।

- हमारा मस्तिष्क प्रतिबिंब को अनेक प्रकार से समझता और उसका अर्थ निकालता है जैसे कि वह वस्तु को सीधा देखता है हालांकि रेटिना पर बनने वाला प्रतिबिंब उल्टा होता है।
- रेटिना पर प्रतिबंब के फोकस किए जाने को समंजन (accommodation) कहते हैं। फोकस करना प्रत्यास्थ (elastic)

लेन्स की वक्रता में परिवर्तन लाकर किया जाता है। दूर देखने के लिए लेन्स अधिक चपटा अथवा पतला कर दिया जाता है। यह लेन्स की सामान्य दष्ठा होती है, इस दष्ठा में लेन्स निलंबन स्नायुओं द्वारा फैलाया गया रहता है। निकट देखने के लिए सिलियरी पेष्ठियाँ (ciliary muscles) (जो वष्ठाकार होती हैं) संकुचित होती है जिससे वहाँ पर नेत्रगोलक की परिधि घटती है और उससे निलंबन स्नायुओं पर तनाव कम हो जाता है और लेन्स अपनी प्रत्यास्थता के कारण मोटा (गोल अथवा उत्तल) हो जाता है।

**द्विनेत्री दष्ठि (Binocular vision)**

मानव सहित सभी प्राइमेट स्तनियों में दोनों आँखें सामने की ओर स्थित होती हैं। इस व्यवस्था से मस्तिष्क में प्रतिबिंबों का अतिव्यापन (एक-दसरे के ऊपर आ जाना) होता है जिससे गहराई का बोध होता है

**आँखों के तीन सामान्य दोष :–**

1. **निकट दष्ठि (Near-sightedness या Myopia)** - इसमें व्यक्ति नज़दीक की वस्तुओं को तो साफ-साफ देख लेता हैं मगर दूर की चीजों को ठीक से नहीं देख पाता। दूर की वस्तुओं का प्रतिबिंब रेटिना के आगे बनता है। यह दोष उपयुक्त अवतल लेन्स के द्वारा ठीक किया जा सकता है (यह लेन्स या तो चष्ठमें के फ्रेम लगाए जा सकते हैं या कॉन्टेक्ट लेन्सों की तरह इस्तेमाल किए जा सकते हैं)।
2. **दूर-दष्ठि** - इस दोष में निकट की वस्तुओं का प्रतिबिंब रेटिना के पीछे बनता है और इसका समाधान एक उपयुक्त उत्तल लेन्स के इस्तेमाल से किया जाता है।
3. **कैटेरेक्ट** वह दष्ठा है जिसमें लेन्स सफेद अपारदर्ष्ठी हो जाता है (सामान्यत: उम्र के साथ-साथ)। इस प्रकार के लेन्स को ष्ठाल्य क्रिया द्वारा निकाल दिया जाता है और या तो उसकी जगह पर एक अंत:नेत्री लेन्स लगा दिया जाता है अथवा उपयुक्त चष्ठमा लगवा दिया जाता है।

**कान**

इन अंगों के द्वारा आप अलग-अलग ध्वनियों को सुन सकते हैं। हमारे चारों ओर की वायु में भांति-भांति के कंपन होते हैं जिन्हें ध्वनि तरंगें कहते हैं। सुनने के लिए हमारे दाएँ-बाएँ एक-एक कान होता है। कान वायु में मौजूद कंपनों को तंत्रिका-आवेगों में बदल देते हैं जो आगे मस्तिष्क में पहुँचते हैं, और मस्तिष्क उनका अर्थ निकाल लेता है।

कान के तीन मुख्य विभाजन होते हैं - बाह्य कान, मध्य कान, तथा भीतरी कान

(क) बाह्य कान (External ear) में ये भाग आते हैं:-

- बाहर को उभरे हुए कर्ण पल्लव जिसके भीतर कार्टिलेज का आलम्ब होता है, यह ध्वनि तरंगों को भीतर की ओर को दिष्ठा देता है।
- श्रवण नाल जिसमे से होकर ध्वनि-तरंगें कान के पर्दे (कर्णपटह झिल्ली (tympnic membrane) तक पहुंचती हैं।

(ख) मध्य कान (Middle ear) में ये भाग आते हैं:-

- वायु से भरी एक कर्णपटह गुहा
- तीन सूक्ष्म हड्डियाँ मैलियस (malleus, ''हथौड़ा hammer''), ''इंकस (incus, ''निहाई anvil'') तथा स्टेपीज़ (stapes, रकाब stirrup) होती हैं इन तीनों को सामूहिक रूप में ''कर्णास्थिकाएँ (ear ossicles)'' कहते हैं। मैलियस कान के पर्दे से संपर्क बनाती है तथा स्टेपीज़ भीतरी कान की अंडाकार खिड़की (oval window) को छुए होती है।
- यूस्टेकियन नली (Eustachian tube) कर्णपटह गुहा को ग्रसनी के साथ जोड़ें रखती हैं। यह कान के पर्दे के दोनों ओर वायु-दाब को समान बनाए रखनें में सहायता करती है।

(ग) भीतरी कान (Internal ear) इसके दो मुख्य भाग आते हैं :-

**(i) कॉक्लिया** (Cochlea) (कर्णावर्त) - यह एक लंबी कुंडलित संरचना होती है जो कुछ-कुछ ष्ठांख की कुंडली की तरह की होती है। इसमें कुल ढाई चक्र बने होते हैं। इसके भीतर की चक्कर खाती हुई गुहा झिल्लियों द्वारा पष्ठक हुई तीन समांतर नलिकाओं अथवा नालों में विभाजित हो जाती है इन नालों के भीतर एक तरह एंडोलिम्फ (endolymph) भरा होता है। बीच की नाल में सुनने से संबंधित संवेदी कोष्ठिकाओं से युक्त क्षेत्र होते हैं जिन्हें कॉर्टी-अंग (Organ of corti) कहते हैं।

(ii) वेस्टिब्यूलर उपकरण (Vestibular apparatus) (प्रधान उपकरण) (संतुलन से संबंधित) इसमें ये आते हैं–

- तीन अर्धवष्ठ नालें (semicircular canals) जो एक-दूसरे से समकोण बनाते हुए व्यवस्थित होती हैं। प्रत्येक नाल का एक सिर चौड़ा होकर एक ऐम्पुला (ampulla) बनाता है जिसके भीतर संवेदी कोष्ठिकाएँ होती हैं और उनसे निकलने वाले तत्रिका-तंतु एक साथ मिलकर श्रवण-तंत्रिका (auditory nerve) बनाते हैं।
- एक छोटा स्तम्भ जो अर्धवष्ठ नालों के आधारों कों कॉक्लिया

से जोड़ता है। इसके दो क्षेत्रों यूट्रिकुलस तथा सैकुलस में भी संवेदी कोष्ठिकाएँ होती हैं।

**सुनने की क्रियाविधि** - यूँ तो सुनने की पूरी प्रक्रिया तुरंत एक साथ होती है, फिर भी इसमें अनेक चरण क्रमवत होते पाए जाते हैं।

- ध्वनि तरंगें श्रवण नाल में प्रवेष्ठा करतीं और कान के पर्दे को कंपित करती है।
- पर्दे के कंपन मेलियस में, फिर आगे इंकस में, फिर स्टेपीज़ में स्थानांतरित हो जाते हैं। इसके बाद स्टेपीज़ ध्वनि तरंगों को आगे अंडाकार खिड़की में पहुँचा देती है जिससे वह कंपन करने लग जाती है।
- ये कंपन कॉक्लिया के भीतर के तरल को गति प्रदान कर देते हैं। इस तरल की गति (स्पंदन) को कार्टी-अंग पकड़ लेते तथा तंत्रिका आवेगों के रूप में कॉक्लिया तंत्रिकाओं में पहुँचा देते हैं।
- इन आवेगों को कॉक्लिया-तंत्रिका मस्तिष्क के कॉर्टेक्स के श्रवण-केंद्रों में पहुँचा देती हैं।

**संतुलन बनाए रखनें में भीतरी कान की भूमिका –**

इस कार्य से संबद्ध भाग अर्धवष्ठ नालें तथा वेस्टिब्यूलर उपकरण (यूट्रिकलस तथा सैकुलस) होते हैं।

अर्धवष्ठ नालें तीन भिन्न समतलों में व्यवस्थित होती हैं। इनके भीतर एक तरल (एंडोलिम्फ) होता हैं। ष्ठारीर की स्थिति तथा ष्ठीर्ष की स्थिति में होने वाले किसी भी परिवर्तन से नालों के भीतर का यह तरह गति करने लग जाता है। इन गतियों को ऐम्पुलों के संवेदी रोम ग्रहण कर लेते हैं और फिर वहां से बने आवेग श्रवण तंत्रिका के माध्यम से मस्तिष्क में भेज दिए जाते हैं। इस प्रकार ये नालें स्थैतिक संतुलन "(static balance)" (गुरूत्व के कारण) से संबंधित होती हैं।

यूट्रिकुलस तथा सैकुलस का संबंध गतिज संतुलन (dynamic equilibrium) से है (अर्थात जब ष्ठारीर गति कर रहा होता है)। एंडोलिम्फ में पाए जाने वाले कैल्ष्ठियम कार्बोनेट के सूक्ष्म कण संवेदी रोमों को दबाते है जिससे तंत्रिका तंतुओं में आवेग पैदा होते हैं

यदि आप गोल-गोल चक्कर खातें जाएँ, तो अर्धवष्ठ नालो के भीतर का तरल भी चक्कर खाने लग जाता है। जब आप चक्कर खाना बंद कर देते हैं तब भी कुछ समय तक यह तरह चक्कर खाता रहता है और आपको चक्कर महसूस होने लगता है। जहाजी मतली, विमान मतली अथवा कार मतली का आना कान की नालों एवं वेस्टिब्यूल द्वारा अपसामान्य संवेदनों के कारण महसूस होता है।

**स्वाद तथा गंध के संवेद**

ये दोनों संवेद रासायनिक संवेद होते हैं और यह संपर्क में आने वाले रासायनिक पदार्थ की प्रकष्ठा पर निर्भर होते हैं। स्वाद के मामले में पदार्थ का सीधे संवेदी स्वाद कलिकाओं के संपर्क में आने से संबंधित है जबकि गंध के मामले में रसायन के अणु हवा द्वारा सांस के साथ भीतर आते हैं।

Gupta Classes

# 10. जनन

- जनन वर्तमान जीवों (जनकों) से उसी जाति की नई व्यष्टियों के उत्पन्न होने की प्रक्रिया है।

## जनन के प्रकार

- सजीव में जनन मुख्यत: दो विधियों से होता है:
  - i) अलैंगिक जनन (Asexual reproduction)
  - ii) लैंगिक जनन (Sexual reproduction)
- अलैंगिक जनन में संतति एक ही जनक व्यष्टि से पैदा होती है। अलैंगिक जनन एककोष्ठिकीय जीवों, कुछ पादपों तथा बहुकोष्ठिकीय जंतु, जैसे- स्पंज, हाइड्रा में पाया जाता है।
- लैंगिक जनन में दो भिन्न-भिन्न लिंग वाले जीवों- एक नर और एक मादा की सहभागिता की आवष्ठयकता होती है।

## अलैंगिक जनन की विभिन्न विधियाँ

i) **विखण्डन** (Fission)- एक कोष्ठिकीय जीव, जैसे- अमीबा, पैरामीष्ठियम तथा अन्य प्रोटोजोआ वर्ग के सदस्य इस विधि से प्रजनन करते हैं। इस विधि में जनक जीव दो संतति कोष्ठिकाओं में विभाजित होता है और तब इनमें से प्रत्येक वयस्क जीव में वष्ठद्धि करता है, इसे **द्वि-खण्डन** (Binary fission) कहते हैं। कभी-कभी केन्द्रक के बारे में विभाजन से अनेक संतति केन्द्रकों का निर्माण होता है, और कोष्ठिकाद्रव्य का एक छोटा-सा खण्ड प्रत्येक संतति केन्द्रक के चारों ओर झिल्ली का निर्माण करता है। इसे **बहुविखण्डन** (Multiple fission) कहते हैं, उदाहरण- मलेरिया परजीवी, अमीबा व अन्य।

ii) **मुकुलन** (Budding), उदाहरण- एककोष्ठिकीय जीव में खमीर (Yeast) तथा बहुकोष्ठिकीय जीवों में जैसे हाइड्रा के व्यस्क ष्ठारीर से एक छोटा उभार बनता है, इसे **कलिका** (Bud) कहते हैं। यह जनक ष्ठारीर से अलग होकर एक नया ष्ठारीर बनाता है। इस विधि को मुकुलन (Budding) कहते हैं।

## बीजाणु जनन (Spore formation)

- अधिकतर कवकों और जीवाणुओं में अलैंगिक प्रजनन की सामान्य विधि है। बीजाणु जनन में कवक तंतु से एक संरचना बनती है। जिसे बीजाणुधानी (Sporangium) कहते हैं। बीजाणुधानी में केन्द्रक तथा कोष्ठिकाद्रव्य विभाजन से बहुत सारे बीजाणु (Spores) बनते हैं जो अवमुक्त होकर नया कवक तंतु बनाते हैं, उदाहरण राइजोपस (Rhizopus), म्यूकर, पैनीसीलियम।

## पुनर्जनन (Regeneration)

- खंडित ष्ठारीरिक भागों से एक पूर्ण जीव प्राप्त करने की जीव की क्षमता को पुनर्जनन या पुनरूद्भवन कहते हैं, उदाहरण- हाइड्रा को यदि कई टुकड़ों में काटा जाए तो, प्रत्येक टुकड़े से, जीव ष्ठारीर बन जायेंगे। अन्य उदाहरण Spirogyra ष्ठैवाल, प्लेनेरिया, स्पंज।

## कायिक प्रवर्धन (Vegetative propagation)

- यह उच्च वर्ग के पादपों में पाया जाता है। पादप के वर्धी भाग जैसे- जड़, तना, पत्ती से नया पादप परिवर्धित होता है, उदाहरण- अमरूद की जड़ के ऊपर की कलियां, पत्थर चट्टा (Bryophyllum) की पत्तियों की कलियां, अन्य उदाहरण- प्याज, केला, लहसुन, जलकुंभी।

**दाब लगाना** (Layering)

- दाब लगाने में पादप के तने की एक टहनी को खींचकर मिट्टी में दबा दिया जाता है। यह जनक पादप से जुड़ा रहता है। दबे हुए भाग से जड़ निकलने के पष्ठचात, इसे जनक पादप से अलग कर दिया जाता है, उदाहरण- रसभरी, स्ट्राबेरी, नींबू, अमरूद, बोगेनवेलिया, चमेली, नोगरा।

**कलम लगाना** (Grafting)

- इसने भिन्न-भिन्न पादपों के दो भागों को आपस में एक साथ इस प्रकार जोड़ा जाता है कि वे संयुक्त होकर एक पादप के रूप में विकसित होते हैं, जो भाग दूसरे पौधे के ऊपर लगता है, उसे **कलम** (Scion) कहते हैं तथा जिस पौधे पर कलम बाँधा जाता है उसे **स्कंध** (Stock) कहते हैं। दोनों पादपों के एधा (Cambium) एक दूसरे के सम्पर्क में आने चाहिए। उदाहरण, नींबू पर संतरे का स्कन्ध, नींबू, अंगूर, गुलाब आदि।

## सूक्ष्म प्रवर्धन

- संष्ठलेषित माध्यम में कोष्ठिकाओं तथा ऊतकों द्वारा किसी पादप की उत्पत्ति को सूक्ष्म प्रवर्धन कहते हैं। इस विधि में माध्यम (Medium) महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसमें वष्ठद्धि के

लिए आवष्ठयक पोषक तत्व तथा हार्मोन पाए जाते हैं। एक कोष्ठिका या ऊतक को किसी उपयुक्त कृत्रिम माध्यम में विसंक्रमित अवस्था (Sterile conditions) में स्थानांतरित किया जाता है। ऊतक तीव्र वष्ठद्धि वाले कोष्ठिकीय पुंज (Cellular masses) में विकसित होता है, जिसे **कैलस** कहते हैं। कैलस को वष्ठद्धि तथा विभेदन के लिए अन्य माध्यम में स्थानांतरित किया जाता है, जो छोटे पादपक बनाते हैं। ये पादपक (Plantlet) मिट्टी या गमलों में लगाए जाते हैं जहाँ पर वे परिपक्वता तक वष्ठद्धि करते हैं।

- ऊतक संवर्धन तकनीक का उपयोग ष्ठोभनीय पादपों- जैसे आर्किड (ष्ठातावरी), डहेलिया तथा कर्नेष्ठान के उत्पादन के लिए किया जाता है।

### अनिषेक जनन (Parthenogenesis)

- यह अनिषेचित अंडे से एक जीव के विकास की क्रिया है। इस प्रकार के फूलों में बीज नहीं होते हैं।

## लैंगिक जनन

**(Sexual Reporduction)**

- लैंगिक जनन के लिए दो लिंगों नर और मादा का होना आवष्ठयक है।
- जिन जीवों में नर एवं मादा जनन अंग अलग-अलग होते हैं उसे **एकलिंगी** (Unisexual) कहते हैं।
- ऐसे जीव जिनमें नर और मादा जनन अंग एक ही जीव में पाए जाते हैं उसे **द्विलिंगी** (Bisexual) या हर्मोफ्रोडाइट कहते हैं, उदाहरण- फीताकृमि, केंचुआ, तारामीन (Starfish)।
- **जनद** (Gonads) प्राथमिक लैंगिक अंग होते हैं। जनद अर्धसूत्री विभाजन द्वारा युग्मक (Gamets) बनाते हैं।
- **वष्ठषण** (Ovary) नर जनद होता है जो ष्ठुक्राणुओं को उत्पन्न करता है।
- अंडाष्ठाय, मादा जनद है जो अंडे या अंडाणुओ को उत्पन्न करता है।
- लैंगिक जनन का प्रारंभ दो विभिन्न युग्मकों (Gemates) के सम्मिलन से होता है जिसे निषेचन (Fertilisation) कहते हैं इसमें ष्ठुक्राणु नर युग्मक तथा अंडाणु मादा युग्मक निषेचन के बाद एक युग्मनज (Zygote) बनाता है जो नए जीव में विकसित होता है।
- अकष्ठेरूकीय मछलियों तथा उभयचरों में निषेचन सामान्यत: ष्ठारीर के बाहर होता है, इसे वाह्य निषेचन कहते हैं।
- सरीसष्ठ, पक्षियों तथा स्तनधारियों (मानव सहित) में आंतरिक निषेचन पाया जाता है।
- ऐसी अवस्था में वष्ठषण से नर युग्मक (ष्ठुक्राणु) मादा के ष्ठारीर में स्थानांतरित होते हैं, जहाँ निषेचन पूर्ण होता है।
- यह स्थानांतरण संगम या मैथुन (Copulation) के समय होता है।
- संगम से संबद्ध संरचनाओं को मैथुनांग या सहायक लैंगिक अंग (Accessory sex organ) कहते हैं।
- लैंगिक जनन, संततियों में गुणों की विविधताओं को बढ़ावा देता है क्योंकि इसमें दो विभिन्न तथा लैंगिक असमानताओं वाले जीवों से आए युग्मकों का संलयन होता है।

## पौधों में लैंगिक जनन

**(Sexual Reproduction in Plant)**

- अधिकतर पौधे उभयलिंगी होते हैं, जिसमें नर और मादा जननांग एक ही पौधों में पाए जाते हैं पादपों का जननीय भाग पुष्प होता है। पुष्प के विभिन्न भाग होते हैं- बाह्यदल (Sepals), दल (पंखुड़ियाँ-Petals), पुंकेसर (Stamen), अंडप (Carpel)
- बाह्यदल प्राय: हरा तथा दल (Petals) रंगीन और ष्ठोभनीय होते हैं।
- पुंकेसर तथा अंडप, जनन भाग होते हैं। प्रत्येक पुंकेसर में एक वंष्ठ (Stalk) होते हैं जिसे **तंतु** (Filament) कहते हैं तथा एक चपटा ष्ठीर्ष जिसे **परागकोष** (Anther) कहते हैं, पाया जाता है। परागकणों (Pollen grains) की उत्पत्ति परागकोष में होती है। प्रत्येक परागकण से दो नर युग्मक (पुंयुग्मक) (Pollengrains) बनते हैं।
- अंडप (Carpel) के तीन प्रमुख भाग होते हैं- नीचे का फूला हुआ भाग अंडाष्ठाय (Ovary) ऊपर वाला चपटा भाग वर्त्तिकाग्र (Stigma) तथा मध्य में लंबी वर्त्तिका (Style) होती है। अंडाष्ठाय (Ovary) में बीजांड (Ovules) होते हैं।
- प्रत्येक बीजांड में एक अंडा होता है जो मादा युग्मक है।
- पौधे में नर तथा मादा युग्मकों का संलयन तब होता है जब परागकण उसी पुष्प या दूसरे पुष्प से स्थानांतरित होते हैं।
- **परागण** (Pollination)- परागकणों का परागकोष से वर्तिकाग्र तक के स्थानांतरण को परागण कहते हैं। परागकणों के स्थानांतरण के अनेक माध्यम हैं जैसे- वायु, जल कीट आदि।

- परागण दो प्रकार के होते हैं:

1. **स्वपरागण** (Self pollination)

   किसी पुष्प के परागकोष से उसी पुष्प के या उस पौधे के अन्य पुष्प के वर्तिकाग्र तक परागकणों का स्थानांतरण स्वपरागण कहलाता है।

2. **पर-परागण** (Cross pollination)

   एक पुष्प के परागकोष से उसी जाति के दूसरे पौधों के पुष्प के वर्तिकाग्र तक परागकणों का स्थानांतरण पर-परागण कहलाता है।

## पौधों में निषेचन

**(Fertilisation in Plant)**

- पौधों में परागण के बाद निषेचन होता है। जब परागकण वत्तिकाग्र में एकत्रित हो जाते हैं तब उनका अंकुरण होता है, उसमें से एक नली जो वर्त्तिका में प्रवेष्ठा करती है उसे **परागनलिका** (Pollen tube) कहते हैं। यह नलिका वर्त्तिका से होते हुए, बढ़कर अंडाष्ठाय तक पहुंचती है, जहां बीजांड स्थित होता है। पराग नलिका एक सूक्ष्म छिद्र द्वारा बीजांड में **बीजांडद्वार** (Micropyle) कहते हैं। बीजांड के अंदर परागनलिका से दो पुंयुग्मक (Pollengrains) भ्रूणकोष में प्रवेष्ठा करते हैं भ्रूणकोष में अंड रहता है। एक पुंयुग्मक का अंड से संलयन होता है। नर और मादा युग्मकों का यह संलयन, **युग्मक संलयन** (Syngamy) कहलाता है तथा इससे युग्मनज बनाता है।
- अन्य पुंयुग्मक का दो ध्रुवीय केन्द्रकों से संलयन होता है। इस क्रिया को त्रिसंलयन (Triple fission) कहते हैं, क्योंकि इस संलयन क्रिया में तीन केन्द्रक होते हैं, एक पुंयुग्मक तथा दो ध्रुवीय केन्द्रक। इससे भ्रूणकोष बनता है जो बीज को अंकुरण तक भोजन (पोषण) प्रदान करता है।
- प्रत्येक भ्रूणकोष में दो संलयन; युग्मक संलयन तथा त्रिसंलयन होने की क्रिया को **दोहरा निषेचन** (Double fertilization) कहते हैं। निषेचन के बाद अंडाष्ठाय फल में तथा बीजांड बीजों में विकसित हो जाते हैं।

Gupta Classes

# 11. कंकाल तंत्र

- हमारा तथा अनेक जन्तुओं का शरीर हड्डियों के ढ़ाँचे से बना है, इसे **कंकाल तंत्र** कहते हैं।
- कंकाल तंत्र अन्तः कंकाल तथा बाह्य कंकाल नामक भागों में बँटा है।
- बाह्य कंकाल का उदाहरण–केंचुओं का ऊपरी कवच, हमारे नाखुन, मत्स्यों के शल्क आदि।
- मानव कंकाल में कुल 206 हड्डियाँ होती हैं।
- अंतःकंकाल एक संयोजी ऊतक है जिसकी उत्पत्ति भ्रूणीय मध्य स्तर *(Mesoderm)* से होती है।
- अस्थियों में $Ca^{++}$ व $Mg^{++}$ लवणों के कारण कड़ा *(Hard)* व उपास्थियों में इन लवणों की अनुपस्थिति से लचीली *(Flexible)* होती है।
- अक्षीय कंकाल के अन्तर्गत खोपड़ी, कशेरूक दण्ड तथा छाती की अस्थियां *(Ribs)* होती है।
- अनुबन्धी कंकाल के अन्तर्गत मेखलाएं तथा हाथ–पैरों की अस्थियां होती है।
- मनुष्य की खोपड़ी में निचले जबड़े की अस्थि तथा तीन जोड़ी कर्णास्थियां ही हिल–डुल सकती हैं।
- मनुष्य के कशेरूक दण्ड में 33 अस्थियां बाल्यावस्था में होती हैं जबकि वयस्कावस्था में ये 26 रह जाती है। कशेरूक दण्ड में 33 कशेरूक होते हैं।
- कर्ण अस्थियों की स्टेपीज सबसे छोटी अस्थि है।
- वक्ष कशेरूक 12 जोड़ी होती है जिससे एक जोड़ी पसलियाँ जुड़ी रहती है। प्रथम 10 जोड़ी एक तरफ कशेरूक दण्ड या मेरूदण्ड से और दूसरी तरफ स्टरनम से जुड़ी रहती है।
- एटलस कशेरूक खोपड़ी को साधे रहता है।
- दांत की इनामेल परत हमारे शरीर में सबसे सख्त पदार्थ होते हैं।
- अंसमेखला हाथ की अस्थियों को अपने से जोड़ने के लिए सन्धि प्रदान करती है।
- श्रोणीमेखला पैरों की अस्थियों को अपने से जोड़ने के लिए सन्धि प्रदान करती है।
- फीमर *(thigh bone)* अस्थि सबसे लम्बी अस्थि है।
- ऐसा स्थान जहाँ पर दो या अधिक अस्थियाँ एक स्थान पर मिलकर हिल–डुल सकते हैं उसे **अस्थि सन्धि** कहते हैं।
- सन्धि के प्रत्येक अस्थि के सिरे पर उपास्थि की एक परत होती है तथा दोनों अस्थियों के मध्य में एक गुहा होती है जिसे **साइनोवियल गुहा** *(Synovial cavity)* कहते हैं, जो एक–दूसरे से लचीले लिगामेण्ट्स द्वारा जुड़ी रहती है, जो अस्थि को मोड़ने में सहायता करता है।
- कब्जा या (हिंजे) सन्धियों की अस्थियां केवल एक ही दिशा में मोड़ी जा सकती है। उदाहरण– कलाई, घुटना व कलाई की संधि।
- प्रसर अथवा ग्लाइडिंग प्रकार की सन्धि में अस्थियां एक दूसरे पर फिसलती है, उदाहरण– रेडियस अल्ना।
- कन्दुक खल्लिका सन्धि में एक अस्थि का सिरा गेंद की भाँति गोल तथा दूसरा एक प्याले की आकृति की गुहा बनाता है जो अंसमेखला तथा ह्यूमेरस अस्थि के जोड़ और फीमर तथा श्रोणिमेखला के जोड़ पर पाई जाती है।
- सैडिल सन्धि में पूर्ण गेंद नहीं बनती न ही पूर्ण प्याला बनता है। इस प्रकार की सन्धि मनुष्य के अंगूठे में पाई जाती है।

## त्वचा –

हमारे ष्शरीर का सबसे बाहरी आवरण त्वचा है। यह त्वचा पारदर्शी नेत्र–ष्लेष्मा (Conjunctiva) के रूप में नेत्र की अनावष्त सतह पर भी अविछिन्न मौजूद होती है। त्वचा होंठों पर मुख के आंतरिक अस्तर के साथ और नासाद्वार पर नाक के आंतरिक अस्तर के साथ और इसी प्रकार अन्यत्र भी अविच्छिन्न रूप से पाई जाती है। त्वचा से व्युत्पन्न अन्य अनेक संरचानाएँ और ग्रन्थियाँ भी होती हैं। ये सभी मिलकर अधयावरणी तंत्र (Integumentary system) बनाते हैं।

### त्वचा की रचना –

त्वचा में ऊतकों की तीन प्रमुख परतें होती हैं –

(क) एपिडर्मिस (epidermis)

(ख) डर्मिस (dermis)

(ग) सबक्युटेनियस परत (अवत्वक परत)

(subcutaneous layer)

**एपिडर्मिस –**

यह बाहरी परत है। इसके स्थन पर नीचे से आ रही नई-नई कोष्ठिकाऐं निरंतर बनती रहती हैं। एपिडर्मिस की सबसे बाहरी उपपरत मृत श्रृंगीय कोष्ठिकाओं से बनी होती है जो सूखी त्वचा का खुजाने पर चूर्ण जैसे पदार्थ के रूप में निकल आती है।

अतिसाणु (melnocytes) मेलानिन (वर्णक) उत्पन्न करने वाली कोष्ठिकाएँ भी इस परत में मौजूद होती हैं।

मेलानिन के ही कारण त्वचा का रंग हल्का या गहरा होता है।

**डर्मिस –**

यह बीच की परत है। यह रूधिर-वाहिकाओं, तंत्रिका-तंतुओं, संवेदी ग्रहियों, रोम-पुटकों, स्वेद और वसा (तेल) ग्रंथियों की बनी होती है।

**अवत्वक परत –**

यह सबसे भीतरी परत है। यह उन कोष्ठिकाओं की बनी होती है जिनमें वसा संचित रहती है (वसा ऊतक)। रोम, नाखून, कुछ ग्रंथियाँ तथा दांतों का डन्टीन भी एपिडर्मिसी परत से व्युत्पन्न होते हैं।

**त्वचा के कार्य –**

1. **सुरक्षा**

- जलरोधी अवरोधक के रूप में कार्य करते हुए यह ष्ठारीर में से जल के बाहर निकलने को रोकती है।
- रोगाणुओं और रसायनों को ष्ठारीर के भीतर जाने से रोकती है।
- मेलानिन वर्णक सौर-विकिरण की हानिकारक पराबैंगनी किरणों को सोख लेता है और इस प्रकार त्वचा के नीचे स्थित ऊतकों को उनके हानिकारक प्रभाव से बचाता है।

2. **ष्ठारीर-तापमान का नियमन :** ष्ठारीर का तापमान बढ़ने पर, त्वचा की रुधिर वाहिकाएँ फैल जाती हैं, जिसके फलस्वरूप उनमें होकर अधिक रूधिर बहता और विकिरण के रूप में ताप ष्ठारीर की सतह पर से बाहर निकल जाता है। दूसरे, ष्ठारीर की सतह पर से पसीना निकलतने लगता है जो वाष्पित होकर ताप को कम कर देता है।

   सर्दियों में, त्वचा की रूधिर-वाहिकाएँ सिकुड़ जाती हैं जिसके कारण उनमें होकर कम रूधिर बहता है और विकिरण द्वारा ताप-क्षय कम होता है।

3. **उष्मारोधन :** त्वचा के नीचे वसा एक परत के रूप में संचित रहती है। यह वसा उष्मारोधन का कार्य करती है, अर्थात ष्ठारीर के ताप को बाहर निकलने से रोकने का कार्य करती है। इसके अलावा वसा धक्का सहने का भी कार्य करती है।

4. **अपष्ठिष्ट पदार्थो का निष्कासन :** पसीने के साथ ष्ठारीर के कुछ अपष्ठिष्ट पदार्थ भी थोड़ी बहुत मात्रा में बाहर निकल जाते हैं। इन पदार्थों में कुछ लवण, यूरिया इत्यादि ष्ठामिल हैं।

5. **संवेदन :** त्वचा में स्पर्ष्ठा, पीड़ा, गर्माहट और दबाव के संवेदन ग्रहण करने के लिए संवेदी अंग होती हैं।

6. **पोषण :** मादाओं की स्तन ग्रन्थियाँ त्वचा से ही व्युत्पन्न होती हैं और ये ग्रंथियाँ नन्हें-मुन्नों को पोषण प्रदान करने के लिए दूध उत्पन्न करती हैं।

Gupta Classes

# 12. स्वास्थ्य

**हैजा (Cholera)**

- विब्रियो कोलेरी (Vibrio cholerae) नामक जीवाणु से होता है।
- उल्टी एवं दस्त इस रोग के विशिष्ट लक्षण हैं।
- जल, खाद्य पदार्थों एवं मक्खियों द्वारा तेजी से फैलता है।
- हैजे का टीका लगवाने से हैजा होने की सम्भावना अत्यधिक कम हो जाती है।
- पानी को उबालकर तथा शुद्ध करके पीना चाहिए।

**डिफ्थीरिया**

- कॉरिनोबैक्टीरियम डिफ्थीराई नामक जीवाणु से होता है।
- यह बच्चों में (विशेषकर 3–5 वर्ष के बच्चों में) अधिक होता है।
- रोगी को अलग कमरे में रखना चाहिए और ऐण्टिसीरम का इन्जेक्शन लगवाना चाहिए।
- बच्चों को D.P.T. नामक टीका लगवाना चाहिए जो इन्हें **डिफ्थीरिया टिटनेस तथा कुकुरखांसी** से बचाता है।

**टिटेनस (Tetanus)**

- क्लॉस्ट्रीडियम टिटेनी नाम जीवाणु से होता है।
- जीवाणु धूल, गोबर आदि से घाव के रास्ते हमारे शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।
- गर्दन, चेहरे तथा जबड़े की मांसपेशियों में पक्षाघात हो जाता है व शरीर अकड़ जाता है।
- चोट लगने पर ATS (Anti toxied Serum) का टीका जरूर लगवा लेना चाहिए।
- बच्चों को D.P.T. का टीका लगवा लेना चाहिए

**तपेदिक या क्षय रोग**

- यह रोग माइको बैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस नामक जीवाणु से होता है।
- ये जीवाणु रोगी के थूक, खाँसी, छींक के सीधे सम्पर्क अथवा भोजन, जल तथा वायु के माध्यम से फैलता है।
- रोगी को हल्का ज्वर तथा खाँसी आती है। खून के साथ बलगम आने लगता है।
- आंतों में आन्त्र क्षय, मस्तिष्क में मस्तिष्क क्षय (Brain T.B.) तथा अस्थियों में अस्थि क्षय (Bone T.B.) उत्पन्न कर देते हैं।
- रोगी को पौष्टिक आहार देना चाहिए। बच्चों को B.C.G. का टीका अवश्य लगाना चाहिए।

  रोगी को विटामिन B काम्प्लेक्स, स्ट्रेप्टोमाइसिन व BCG (बच्चों को) बेसिलस कैलेमिटि ग्लूरिन का टीका अवश्य लगवाना चाहिए।

**टायफाइड या मोतीझरा (Typhoid)**

- यह रोग साल्मोनेला टायफोसा नामक जीवाणु से उत्पन्न होता है।
- इस रोग को फैलाने में मक्खियों की विशेष भूमिका होती है।
- रोगी के बदन में तथा सिर में दर्द रहता है। 101°F तक बुखार भी रहता है।
- जल को उबालकर पीना चाहिए।
- क्लोरोमाइसिटीन (प्रतिजैविक) चिकित्सक की सलाह के अनुसार देना चाहिए।
- शिशुओं को T.A.B. का टीका लगवा देना चाहिए।

**कुष्ठ रोग या कोढ़**

- यह रोग माइको बैक्टीरियम लेप्री (Mycobacterium Leprae) नामक जीवाणु द्वारा होता है।
- यह रोग जिस स्थान पर होता है, वहाँ संवेदनशीलता समाप्त हो जाती है।
- हाथों व पैरों की अंगुलियों में घाव उत्पन्न हो जाते हैं और ये गलकर विकृत हो जाते हैं।
- रोगी के सम्पर्क से बचना चाहिए।
- रोगी को साफ, स्वच्छ वातावरण व कुष्ठ निवारण केन्द्र में रखना चाहिए।

**प्लेग (Plague)**

- यह रोग पाश्चुरेला पेस्टिस (Pasteurella pestis) नामक जीवाणु के कारण होता है।

Gupta Classes

- इस रोग के जीवाणु पिस्सुओं में पाए जाते हैं और उनके आमाशय में विकसित होते हैं।
- चूहे, गिलहरी आदि पिस्सुओं के वाहक होते हैं।
- रोगी को तेज बुखार तथा गर्दन व टांगों में गिल्टियां निकल आती हैं।

**काली खाँसी या कुकुर खाँसी (Whooping cough)**

- बोर्डीटेला पेस्टिस (Bordetella pestis) नामक जीवाणु से होता है।
- यह रोग प्रायः छोटे बच्चों को होता है, बहुत देर तक खाँसी होती है।
- D.P.T. का टीका लगवाकर शिशुओं में इस रोग के लिए प्रतिरोधकता उत्पन्न कर देनी चाहिए।

**छोटी माता (Chicken pox)**

- यह रोग वैरिसेला विषाणु (Varicella virus) के कारण होता है।
- रोगी के शरीर पर छोटे-छोटे दाने तथा हल्का बुखार हो जाता है।
- यह व्यक्ति को एक बार हो जाने पर दोबारा नहीं होता है।
- यद्यपि प्रायः यह अपने आप ठीक हो जाता है, फिर भी चिकित्सिक से परामर्श से कुछ विशिष्ट प्रतिजैविक दिए जा सकते हैं।

**चेचक (Small pox)**

- यह विषाणु द्वारा फैलता है।
- सिर दर्द, कंपकंपी तथा उल्टी के साथ तेज बुखार हो जाता है।
- यह एक संक्रामक रोग है, रोगी के सम्पर्क में आने से बचना चाहिए।
- 3-4 दिन बाद मुँह पर लाल दाने निकल आते हैं, जो कि शीघ्र ही पूरे शरीर पर फैल जाते हैं।
- चेचक का टीका लगवा लेना चाहिए।

**पोलियो**

- यह रोग सबसे छोटे पोलियो वाइरस (Polio-virus) द्वारा फैलता है।
- आंत की दीवारों से होते हुए ये रूधिर प्रवाह के साथ रीढ़ रज्जू (Spinal cord) में पहुँच जाते हैं, जहाँ पर ये विभिन्न अंगों की मांसपेशियों को नियंत्रित करने वाली तन्त्रिकाओं को क्षति पहुँचाते हैं।
- बच्चे विकलांग हो जाते हैं।
- विषाणु मस्तिष्क के श्वास केन्द्र को भी नष्ट कर देते हैं जिससे रोगी साँस नहीं ले पाता।
- बच्चों को पोलियों ड्रॉप्स पिलाना चाहिए।

**खसरा**

- यह मोर्बेली विषाणु (Morbeli virus) द्वारा होता है।
- यह रोग प्रायः बच्चों में होता है तथा इस रोग के विषाणु नाक से स्त्राव द्वारा फैलते हैं।
- शरीर पर लाल दाने हो जाते हैं।
- बच्चों को ठण्डक व सीलन से बचाना चाहिए।
- स्वस्थ बच्चों को रोगी बच्चों के सम्पर्क में नहीं आने देना चाहिए।

**रेबीज (Rabies)**

- इस रोग को हाइड्रोफोबिया (Hydrophobia, fear of water) के नाम से भी जाना जाता है।
- एक घातक विषाणुजन्य रोग है जो केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र को मुख्यतः प्रभावित करता है।
- रेबीज, समतापी (Warm-blooded) जन्तुओं जैसे, कुत्तों, बिल्लियों आदि में मिलता है। मनुष्य में इनके द्वारा काटने से होता है।
- सिर दर्द, गले में दर्द तथा हल्का बुखार।
- धीरे-धीरे शोर, तेज रोशनी व ठण्डी हवा के प्रति रोगी असहनशील हो जाता है।
- यह रोग **लाइसा वाइरस टाइप-I** द्वारा प्रायः मनुष्य में कुत्ते द्वारा काटे जाने पर कुत्ते की लार के साथ पहुँचता है। इसे क्ट्रीट विषाणु भी कहते हैं।
- घाव को साबुन व पानी में अच्छी तरह धोकर 1% बेंजलकोनियम क्लोराइड की मरहम की जाती है।
- रेबीपुर (Rabipur), HDCA तथा एन्टीसीरम के इंजेक्शन इस रोग के लिए बनाए गए हैं।
- लावारिस कुत्तों को मार डालना चाहिए।
- पालतू कुत्तों को रेबीज का टीका लगाना चाहिए।

**अमीबिएसिस (Amoebiasis)**

- अमीबिएसिस या अमीबिक पेचिश (Amoebic dysentry) का यह रोग मनुष्य में एण्टिअमीबा हिस्टोलिटिका नामक

प्रोटोजोआ के परजीवी सदस्य के कारण होता है।

- पीड़ित मनुष्यों के आंत में फोड़े (Ulcers) हो जाते हैं, जिसके कारण पेचिश या अतिसार हो जाती है।
- रोगी को सिर दर्द तथा बुखार हो जाता है।
- इस रोग से बचने के लिए हरी सब्जियों को पोटेशियम परमैंगनेट में घण्टा तक भिगोकर उपयोग में लाना चाहिए।
- फ्यूमिजिल, एरिथ्रोमाश तथा एमेटिन (Ematine) नामक एक ऐल्केलॉयड से रोगी को कुछ समय के लिए आराम मिलता है।

**मलेरिया**

- यह रोग प्लाज्मोडियम (Plasmodium) नामक परजीवी प्रोटोजोआ की जातियों से होता है।
- 1880 में एक फ्रांसीसी **डॉक्टर ए. लेबेरान** (A. Laveran) ने मलेरिया रोग से ग्रस्त कवि के रक्त में मलेरिया परजीवी को देखा।
- मादा ऐनोफिलीज (Anopheles) मच्छर इस परजीवी को स्वस्थ मनुष्य के रक्त में पहुँचा देता है।
- घर के आप–पास सफाई रखनी चाहिए। मच्छरों को मारने के लिए डी.डी.टी. का छिड़काव करना चाहिए।
- कुनैन, कैमाक्विन आदि चिकित्सक के परामर्शानुसार लेना चाहिए।

## लैंगिक सम्पर्क जन्य रोग

**गोनोरिया** (Gonorrhoea)

- यह निसेरिया गोनोरहीआ नामक जीवाणु से होती है।
- पुरूषों में यूरेथ्रा में सूजन आती हैं, पेशाब जलन के साथ आता है, साथ मवाद (पस) भी आता है।
- स्त्रियों में यह यूरेथ्रा, वेजिना और सर्विक्स में भी हो सकता है।
- उपचार हेतु पेनिसिलिन, नॉरबेक्टिन, टेट्रासाइक्लीन और सिप्रोफ्लॉक्सिन नामक प्रतिजैविकों का प्रयोग किया जाता है।

**सिफिलिस**

- यह ट्रेपोनेमा पैलिडियम नामक जीवाणुओं से होता है।
- मूत्र के मार्ग में दाने निकल आते हैं।
- उपचार के लिए पेनिसिलिन, डॉइक्सिसाइक्लीन, नॉरबैक्टिन का प्रयोग किया जाता है।

## रक्त संचरण से फैलने वाले रोग

**एड्स** (AIDS)

- सन् 1981 में समलैंगिक संबंध रखनेवाले युवाओं में पता चलने के बाद इस एड्स रोग (Aquired Immune Deficiency Syndrome) का पता चला।
- सन् 1983 में **लू मॉन्टेनिर** (Lu Montagneir) के नेतृत्व में फ्रांसीसी वैज्ञानिकों के दल ने तथा सन् 1984 में अमेरिका में।
- एक से अधिक व्यक्यिों से यौन संबंध रखने पर रोग होने की आशंका।
- संक्रमित रूधिर दान करने से या रूधिर ग्रहण करने से।
- यौन संबंधों में सावधानी बरतनी चाहिए।

**हीपैटाइटिस** (Hepatitis)

- यकृत रोग को हीपैटाइटिस कहते हैं।
- इस रोग में $O_2$ (ऑक्सीजन) का अभाव हो जाता है।
- निःश्वसन वायु में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो।
- उपापचयी दर के बढ़ने से ऑक्सीजन की आवश्यकता भी बढ़ जाती है।
- हीपैटाइटिस A व B वाइरस के संक्रमण के कारण होती है।

## ह्रासित रोग

**खदय के रोग (Heart Diseases)**

**अतितान** (Hypertension)

- उच्च धमनी दाब जो धमनियों के बहुत देर तक सिकुड़ते रहने के कारण उत्पन्न हो जाता है।
- फिक्र और बुरी खबरों से केन्द्रीय तंत्रिका तन्त्र का जरूरत से ज्यादा उद्दीपन।
- नींद काफी फायदेमन्द होती है।

**ऐटिरोस्क्लेरोसिस** (Atheresclerosis)

- इस रोग में धमनियों की दीवारें सख्त हो जाती हैं।
- धमनियों, महाधमनी, हृदय तथा मस्तिष्क की धमनियों के अन्दर कोलेस्टेरॉल की थिगलियाँ गाढ़ी हो जाती है तथा दलिए जैसी हो जाती है।

**हृदयशूल** (Angina Pectorits)

- हृदय की रूधिर वाहिनियों में थोड़ी-थोड़ी देर के लिए ऐंठन आ जाती है।
- यह रोग अतितान की भाँति होता है।
- रोगी को छाती में तनाव तथा कभी-कभी दर्द भी अनुभव होता है।

**हृदय पेष्ठी का रोग**

- हृदयपेशी के किसी भी भाग को रक्त नहीं पहुँच पाता।
- हृदय की किसी भी धमनी को ल्यूमेन के मन्द हो जाने से हृदयपेशी का रोग हो जाता है।

**हृदयपात** (Heart Failure)

- हृदयपात तब होता है जब हृदय के कपाटों में कुछ खराबी आ जाती है, या रंध्रों में खराबी आ जाती है।
- हृदयपात प्रायः गठिए के कारण होता है।

**मधुमेह (Diabetes)**

- अग्न्याशय की कोशिकाएं इन्सुलिन हॉर्मोन बनाना बन्द कर देती हैं। जिससे शर्करा का उपापचय नहीं हो पाता।
- पेशाब व रक्त मे शर्करा की अत्यधिक मात्रा हो जाती है।
- रोगी को इन्सुलिन के इंजेक्शन नियमित रूप से देना चाहिए।

**जोडो का दर्द (Arthritis)**

- इसे गठिया या वात भी कहते हैं।
- **रूहमेटाइड अर्थराइटिस**- साइनोसिस झिल्ली में सूजन आना। कार्टिलेज के ऊपर एक सख्त ऊतक उत्पन्न हो जाता है जिससे चलने-फिरने में कठिनाई होती है।
- **ऑस्टिओअर्थराइटिस**- 40 वर्ष से अधिक आयु के लोगों में प्रायः जोड़ों की कार्टिलेज ह्रासित होने से उनके जोड़ कड़े हो जाते हैं।
- **गाऊट (Gout)**- सन्धियों में सिट्रिक अम्ल के क्रिस्टल जम जाने से यह बीमारी होती है।

## पैतष्क रोग

**उपापचयी त्रटियाँ (Metabolic Errors)**

**फिनाइलकीटोन्यूरिया**

- इस रोग से पीड़ित व्यक्तियों में फिनाइल पायरूविक अम्ल को हाइड्रोक्सि फिनाइल पायरूविक अम्ल में परिवर्तन करने की क्षमता खत्म हो जाती है।
- केन्द्रीय तंत्रिका तन्त्र पर कुप्रभाव डालते हैं।

**ऐल्केप्टोन्यूरिया**

- यह रोग होमोजेन्टिसिक अम्ल को ऐसीटोऐसीटिक अम्ल में परिवर्तन करने की क्षमता के अभाव के कारण होता है।
- यह मूत्र के साथ बाहर आता है और वायु के सम्पर्क में आकर काला हो जाता है, मूत्र भी काला हो जाता है।

**ऐल्बिनिज्म**

- पीड़ित मनुष्यों में डाइहाइड्रोक्सीफिनाइल एलानीन को मिलैनिन में बदलने की क्षमता नष्ट हो जाती है।
- त्वचा में भी काले रंग का अभाव होता है व आँखों में भी।
- तेज रोशनी में नहीं देख सकते।

**गणसत्रों की अनियमितताएँ**

**क्लिनेफेल्टर सिण्ड्रोम**

- इस रोग से ग्रस्त पुरूष के नर लक्षण ठीक प्रकार से व्यक्त नहीं होते, क्योंकि उनमें एक या एक से अधिक X गुणसूत्र की असामान्य वृद्धि हो जाती है।
- वृषण तथा जनन अंग पूर्णरूप से विकसित नहीं होते, स्तनों में थोड़ा उभार आ जाता है।

**टर्नर सिण्ड्रोम** (Turner syndrome)

- रोगग्रस्त स्त्री में मादा के लक्षण पूर्णरूप से विकसित नहीं होते। क्योंकि इनमें एक X गुणसूत्र की कमी हो जाती है।
- ऐसी स्त्रियाँ नाटे कद की, गर्दन की त्वचा जालयुक्त, स्तन अविकसित होते हैं।

**मंगोलिज्म**

- इस रोग से ग्रस्त व्यक्तियों में कई कमियां रह जाती हैं, जैसे- शरीर का छोटा (Dwarf condition), मन्द बुद्धि तथा अविकसित अवस्था।
- शरीर की कोशिकाओं के निरीक्षण से पता चला है कि इनकी कोशिका में गुणसूत्रों की संख्या 46 की जगह 47 होती है।

## कैन्सर (Cancer)

- शरीर के किसी भी अंग में, त्वचा से लेकर, अस्थि, ऊतक

यदि वृद्धि अनियन्त्रित हो तो उसे कैन्सर (Cancer) कहते हैं।

- शरीर में गाँठ का रूप धारण कर लेता है, जिसे ट्यूमर कहते हैं।
- ट्यूमर दो प्रकार के होते हैं– (i) सुदम ट्यूमर (ii) दुर्दम ट्यूमर
- रूधिर तथा लसिका से होकर यह अंगों में पहुँचकर गाँठ उत्पन्न कर देता है।
- जो लोग पान, तम्बाकू अधिक खाते हैं, उन्हें मुख कैन्सर होता है।
- धूमपान करने वाले को गले या फेफड़े का कैन्सर अधिक होता है।
- अनेक रसायन भी कैन्सर उत्पन्न करते हैं, इन्हें हम कार्सीनोजेन (Carcinogen) कहते हैं, जैसे– निकोटिन (Nicotine), कैफीन (Caffin)।
- यद्यपि कैंसर का स्थायी उपचार आज तक सम्भव नहीं हो सका है।
- इसका उपचार शल्यचिकित्सा, रेडियोथेरेपी तथा कीमोथेरेपी के माध्यम से किया जा सकता है।
- रेडियोथेरेपी द्वारा रोगी के विशिष्ट अंग की कोशिकाओं को विभिन्न किरणों से नष्ट किया जाता है।
- कीमोथैरैपी- रसायनिक यौगिकों द्वारा उपचार किया जाता है।

## ऐंथ्रैक्स

- यह बेसीलसऐंथ्रैक्सि या एन्थ्रोसिस नामक जीवाणु द्वारा होता है।
- यह रोग जंगली तथा पालतू पशुओं जैसे कि गाय, भैंस, भेड़ व बकरी में होता है।
- संक्रमित पशु का अधपका मांस खाने से ऐंथ्रैक्स का संक्रमण हो सकता है।
- बेचैनी, भूख न लगना, वमन, दर्द तथा खूनी–उल्टी इसके लक्षण है।
- बिना उपचार के लगभग 20% की मृत्यु हो जाती है।
- ऐंथ्रैक्स का टीका सुरक्षा प्रदान करने में 93% प्रभावी है।
- चिकित्सक के परामर्शानुसार प्रतिजैविक ले सकते हैं।

## मरास्मस

- इस रोग का मुख्य कारण अल्पायु में ही माँ के दूध के स्थान पर अल्प प्रोटीन और कम कैलोरी वाले भोजन का दिया जाना है।
- शरीर की त्वचा की ढीली होकर लटकना प्रमुख लक्षण है।
- भोजन में प्रोटीन ऊर्जा प्रदान करने वाले खाद्य पदार्थो की कमी के कारण होता है।
- शारीरिक एवं मानसिक विकास मंद रहता है।
- पाचन विकार तथा बार-बार अतिसार होना।
- बच्चों को पर्याप्त मात्रा में प्रोटीनयुक्त आहार दें।

## क्वाष्ठिओरकर

- यह प्रोटीन की अत्यधिक हीनता से उत्पन्न विकार है।
- भोजन के प्रति अरूचि, भूख न लगना तथा बच्चे की वृद्धि रूक जाना।
- पेट बाहर की ओर निकल आता है।
- पैर लम्बे, पतले तथा मुड़े होते हैं।
- बाल अपनी चमक खो देते हैं।
- बच्चों को पर्याप्त मात्रा में प्रोटीनयुक्त आहार दें।

## अरक्तता ( एनीमिया )

- शरीर में लोहे की हीनता के कारण होता है।
- रूधिर में हीमोग्लोबीन की प्रतिशत मात्रा बहुत कम हो जाती है।
- अरक्तता से ग्रसित व्यक्ति पीला पड़ जाता है। उसकी भूख मर जाती है तथा वे जल्दी थक जाते हैं।
- विटामिन $B_{12}$ का इन्जेक्शन देने पर एनीमिया ठीक हो जाती है।
- इसके अतिरिक्त कलेजी, अंडे, सीरा, अन्न, दालें पत्तेदार सब्जियाँ (पालक, बथुआ, चौलाई इत्यादि) सेब, केला, अमरूद इत्यादि में लौह तत्व की प्रचुरता होती है।

## गलगंड ( घेंघा )

- आयोडीन हीनता के कारण होता है।
- आयोडीन की कमी से थॉयराइड ग्रंथि का आकार असामान्य रूप से बढ़ जाता है।
- समुद्री खाद्य, पत्तीदार सब्जियाँ, जल तथा आयोडीन

युक्त नमक में आयोडीन प्रचुर मात्रा में होता है।

- आयोडीन युक्त तेल के अंतरपेशीय इंजेक्शन अथवा ICMR द्वारा विकसित सोडियम आयोडेट को गोली घेंघा-उपचार में प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं।

### जीरोप्थैल्मिया

- यह भोजन में विटामिन-A की हीनता से होता है।
- मन्द प्रकाश में स्पष्ट न देख पाना ''रतौंधी'' कहलाता है।
- अश्रुग्रंथि का निष्क्रिय होना, शुष्कता, नेत्र-श्लेष्मा तथा कार्निया का किरेटिन युक्त होना।
- जन्तु स्त्रोत जैसे मछली, कॉड मछली के लिवर तेल, दूध, मक्खन इत्यादि तथा पादप स्त्रोत जैसे अनुपूरक आहार जिसमें विटाामिन-A की प्रचुरता हो।

### रिकेटस (Rickets)

- यह रोग विटामिन-D की हीनता से होता है।
- त्वचा में सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में विटामिन-D का संश्लेषण होता है।
- बच्चों में रिकेट्स तथा स्त्री व्यस्कों में ओस्टियोमेलेसिया (मृदुलास्थि) नामक रोग होता है।
- सूर्य का प्रकाश विटामिन-D (यानी कैल्शियम) प्रमुख स्त्रोत।

### बेरी-बेरी (Beri-Beri)

- यह रोग विटामिन-$B_1$ की कमी से होता है।
- बेरी-बेरी का प्रकोप उन लोगों में अधिक व्यापक है जहाँ पॉलिश किया (भूसा निकाला) हुआ चावल प्रमुख आहार है।
- पेशीय हृदय के आकर में वृद्धि, पाचन संबंधी विकार, स्नायु विकार प्रमुख लक्षण हैं।
- साबुत अन्न के दानों, दालें, मूँगफली तथा पत्तेदार हरी सब्जियों में विटामिन-$B_1$ प्रचुर मात्रा में होता है।
- जन्तुओं से प्राप्त खाद्य पदार्थों जैसे- यकृत, वृक्क, दूध तथा अंडे की जर्दी में विटामिन-$B_1$ उपलब्ध है।

### पेलाग्रा (Pellagra)

- यह रोग विटामिन-$B_5$ (निकेटिनामाइड) की हीनता से होता है।
- पेलाग्रा आमतौर पर उन क्षेत्रों में पाया जाता है जहाँ मक्का प्रमुख आहार है।
- पेलाग्रा से त्वचीय विकार, त्वचा में जलन, छानन (एग्जिमा) मानसिक अधः पतन, अतिसार इत्यादि इसके लक्षण हैं।
- अन्न के चोकर (भूसी), मटर, बीन, हरी पत्तेदार सब्जियाँ, मछली, अंडे का पीतक इत्यादि संवर्धित आहार के सेवन से नियंत्रित हो जाता है।

### स्कर्वी (Scurvy)

- यह रोग विटामिन-C की कमी से होता है।
- मसूड़ों में सूजन तथा खून का आना, पेशियों तथा जोड़ों में दर्द के साथ सामान्य दुर्बलता, थकावट, शारीरिक भार में कमी।
- नींबू, संतरा, नारंगी, अनानास, अंगूर, पालक तथा अन्य पत्तेदार हरी सब्जी, हरी मिर्च में विटामिन-C की प्रचुरता होती है।
- विटामिन-C की गोलियों का सेवन करें।

Gupta Classes

# 13. शरीर की रक्षा प्रणाली

- शरीर में रोगाणु से रक्षा के लिए दो प्रणाली हैं:

  i) अवशिष्ट रक्षा प्रणाली ii) विशिष्ट रक्षा प्रणाली।

## अवष्ठिष्ट रक्षा प्रणाली के अन्तर्गत

- त्वचा प्रथम रक्षा प्रणाली है, इसकी बाहरी कठोर सतह जीवाणुओं और विषाणुओं को अन्दर जाने से रोकती है। ग्रन्थियों से स्त्रावित तेल तथा पसीना सतह को अम्लीय बनाते हैं, इसमें कुछ लाभदायक जीवाणु होते हैं जो अम्ल और अन्य उपापचयी अवशिष्ट छोड़कर शरीर पर बाहरी रोगाणुओं के वृद्धि को रोकते हैं।
- लाइसोजाइम नामक एंजाइम होता है जो बहुत से जीवाणुओं को नष्ट कर देता है, यह एंजाइम आंसू, पसीने और लार में पाया जाता है।
- मवाद (पस) मृत (WBC) कोशिकाओं तथा शरीर तरल के एकत्र होने से बनता है।
- लिम्फोसाइट द्वारा छोड़ा गया पदार्थ ''हिस्टेमिन'' वाहिकाओं को फैला देता है।
- प्रतिरोध क्षमता तंत्र का विज्ञान **एडवर्ड जेनर** ने आरम्भ किया था।
- तरलीय रोध क्षमता तंत्र में विभिन्न वर्ग के प्रोटीन होते हैं जिसे प्रतिरक्षी (एंटिबॉडीज) कहते हैं, ये शरीर के तरल में प्रवाहित होते हैं।
- कोशिका के मध्य स्थित तंत्र, रोगाणुओं, कवक तथा प्रोटिस्टा आदि से होने वाले संक्रामक रोगों से शरीर की रक्षा करते हैं। यह अंग प्रत्यारोपण में भी क्रियाशील होता है और कैंसर जनित कोशिकाओं से स्वयं शरीर की रक्षा करते हैं।
- बाहरी अणुओं को प्रतिजन (एन्टीजन) कहते हैं।
- रोध क्षमता तंत्र की प्रमुख कोशिकाएं श्वेत काणिकाएं है जिन्हें लिम्फोसाइट कहते हैं। ये कोशिकाएं भ्रूण के लिए यकृत में तथा वयस्क की अस्थिमज्जा में स्थित स्टेम कोशिकाओं से बनती है। ये दो प्रकार की है i) T कोशिका ii) B कोशिका
- T कोशिकाएं थाइमस में आकर मिलती है तथा अपने प्रभाव में विविध होती हैं।
- B कोशिकाएं अस्थिमज्जा में ही रह जाती हैं। ये प्रतिजन के सम्पर्क में आकर प्रतिरक्षियां उत्पन्न करती हैं।
- मारक T कोशिकाएं प्रतिजन पर सीधे ही आक्रमण कर उसे नष्ट कर देती हैं।
- सहायक T कोशिकाएं B कोशिकाओं को प्रतिरक्षी उत्पन्न करने के लिए प्रेरित करती है।
- एलर्जी कुछ व्यक्ति का पदार्थों के प्रति अत्यधिक संवेदी होना है। प्रत्येक व्यक्ति सभी एलर्जन के लिए सुग्राही नहीं होता। एलर्जन के संपर्क में आने पर पहली बार एलर्जन मास्ट कोशिकाओं के साथ संयुक्त होकर कोशिकाओं को फाड़ देती है जिससे हिस्टामीन विमुक्त होता है और आँखों में पानी, सांस लेने में तकलीफ त्वचा पर लाल चकत्ते इत्यादि उत्पन्न होने लगते हैं।
- इन्टरफेरॉन विषाणु के संक्रमण होने पर कोशिकाओं से निकलते हैं। ये रासायनिक तौर पर एक प्रोटीन हैं और विषाणु के संक्रमण को रोकते हैं तथा उसे निष्क्रिय करते हैं तथा अन्य कोशिकाओं पर विषाणु संक्रमण से रक्षा करते हैं। यह हीपेटाइटिस एवं इंफ्लुएंजा के उपचार में बहुत प्रभावी है।
- मधुमेह रोग रूधिर में शर्करा का बढ़ जाना है जिससे मूत्र में ग्लूकोज आता है। यह रोग इंसुलिन का स्त्राव न होने पर हो जाता है। इसे डायबिटिज मेलिटस कहते हैं। इंसुलिन का स्त्राव अग्न्याशय के अतःस्त्रावी भाग लैंगरहैंस द्वीप से होता है।
- **हाइपरग्लाइसिमिया**- शर्करा की मात्रा का रूधिर में बढ़ जाना।
- **ग्लूकोसयूरिया**- शर्करा की मात्रा मूत्र में ज्यादा होना।
- रूमैटिक हृदय रोग जीवाणु संक्रमण के कारण होता है। यह बचपन में बार-बार रूमैटिक बुखार आने पर होता है। इसमें हृदय के कपाट या वाल्व ठीक प्रकार से कार्य नहीं करते और हृदय की मांसपेशियां कमजोर हो जाती हैं।
- कोरोनरी हृदय रोग कोरोनरी धमनी में अवरोध होने से हृदय की पेशियों को पर्याप्त रूधिर प्राप्त नहीं होता और

हृदय पेशियाँ क्षतिग्रस्त हो जाती तथा छाती में दर्द उठता है।

- हाइपरटेंसिव हृदय रोग रूधिर दाब बढ़ने के कारण होता है। रूधिर दाब बढ़ने का कारण ज्यादा तनाव एवं फ्रिक और बुरी खबर तथा काम करते समय हद से ज्यादा तनाव।
- ऐथिरोस्केलोसिस रोग में धमनियों की दीवारें सख्त हो जाती हैं और स्वस्थ्य शरीर में नहीं पाये जाने वाले कुछ पदार्थ जमा हो जाते हैं और समान्य कोशिकाओं को हानि पहुँचाते हैं।

## कैंसर के प्रकार

i) कार्सीनोमास एपीथीलियमी (वाह्य त्वचीय) ऊतकों में।

ii) सारकोमास संयोजी ऊतक का कैंसर होता है।

iii) लिम्फोमास लसीका ऊतक का कैंसर होता है।

iv) लिपोमास वसामय ऊतक का कैंसर होता है।

v) ल्यूकोमिया रूधिर कोशिकाओं में।

- ल्यूकेमिया इस कैंसर में श्वेत रक्त कणिकाओं का अनियंत्रित गुणन होता है और वे फिर दूसरे ऊतकों में प्रवेश कर जाते है, जैसे अस्थि-मज्जा आदि।
- कैंसर के लिए कुछ जीन्स उत्तरदायी हैं जिन्हे ''ओंकोजीन्स'' कहते हैं जो पराबैंगनी किरणें, धूम्रपान आदि कारणों से उत्प्रेरित होते हैं। यह रोगों का एक समूह है जिसका लक्षण है कोशिकाओं में अनियंत्रित गुणन होना। ये अन्य सामान्य कोशिकाओं के साथ प्रतिस्पर्धा करती हैं और अन्ततः उन्हे मार देती है।

Gupta Classes

# 14. आनवांशिकी

## परिभाषाएं

- **कारक** (Factor) **अथवा जीन** (Gene)- वंशागतिक लक्षणों को व्यक्त करने वाली स्वतन्त्र इकाई जो कोशिका में पाई जाती है उसे कारक या जीन कहते हैं।
- **एलील** (Allele)- एक गुण के विभिन्न विपर्यायी रूपों को प्रकट करने वाले कारकों को एक दूसरे का एलील कहते हैं। जैसे लम्बापन (T) और बौनापन (t)।
- प्रत्येक लक्षण कारक को एक प्रतीक से व्यक्त किया जाता है, प्रभावी कारक को बड़े अक्षर (Capital letter) तथा अप्रभावी कारक को छोटे अक्षर (Small letter) से व्यक्त करते हैं, उदाहरण- लम्बापन (T) तथा बौनापन (t)
- **लक्षण प्ररूप** (Phenotype)- वे लक्षण जो बाहरी रूप से दिखाई देते हैं तथा उनके द्वारा आनुवंशिक संगठन का पता नहीं चलता। लम्बापन, इसमें आनुवंशिक संगठन का पता नहीं चलता।
- **जीन प्ररूप** (Genotype)- जीवधारी के अनुवांशिक संगठन को जीन प्ररूप कहते हैं, उदाहरण- लम्बे पौधे का आनुवंशिक संगठन (Tt) तथा (TT) दोनों हो सकते हैं।
- **समयुग्मजी** (Homozygous) **तथा विषमयुग्मजी** (Heterozygous)- प्रत्येक जनक (Parent) की कायिक कोशिका में एक ही गुण को व्यक्त करने के लिए दो कारक होते हैं। जब ये कारक एक समान हो जैसे (TT, RR, rr, YY) आदि तो दशा समयुग्मजी होती है और यदि कारक भिन्न हो (Tt, Rr, Yy) तो ऐसी दशा विषमयुग्मजी होती है।

## आनुवांष्ठिकता तथा विभिन्नता

### *(Heredity and Variation)*

- जीवधारियों की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में विभिन्न लक्षणों का प्रेषण या संचरण को आनुवांशिकता कहते हैं। तथा लक्षणों को आनुवांशिक लक्षण कहते हैं।
- जीवधारियों के बीच पाये जाने वाले अंतरों को विभिन्नताएं कहते हैं।
- अलैंगिक जनन करने वाले जीवों मे अगली पीढ़ी के जीवों का समरूप आनुवांशिक ढाँचा होता है तथा अगली पीढ़ी के जीव में बहुत कम विभिन्नताएँ होती हैं जो केवल पर्यावरण के कारण होती है।
- लैंगिक जनन में युग्मक बनते समय अर्द्धसूत्री विभाजन के दौरान जीन विनिमय के फलस्वरूप गुणसूत्रों के नये-संयोजन बन जाते है जिससे लैंगिक जनन करने वाले जीवों में अधिक विभिन्नताएं पाई जाती है।

**मेण्डल के कारक ( जीन ) –** वंष्ठागतिक लक्षणों को व्यक्त करने वाली स्वतंत्र इकाई जो कोष्ठिका में पायी जाती है उसे जीन कहते है।

• जीन ष्ठाब्द का प्रयोग जोहान्सन ने किया (1909)

जीन/कारक दो प्रकार के होते है

I) प्रभावी कारक (Dominant gones)

II) अप्रभावी कारक (Recessive gones)

**प्रभाविता (Dominance)**

विषम युग्मजी जीव में जो जीन अभिव्यक्त होता है उसे प्रभावी (dominant) कहते है तथा इस परिघटना को प्रभाविता कहते है। eg. Tt से युक्त जीव में T (ऊँचापन) स्वयं को प्रकट करता है तथा t (बौनापन) व्यक्त नहीं हो सकता, इसलिये T प्रभावी जीन है।

**अप्रभावी (Recessive)**- यह वह ऐलील है जो प्रभावी जीन की उपस्थिति में स्वयं को वयक्त नहीं कर सकता। ऊपर दिए गए उदाहरण में t अप्रभावी जीन है।

**ष्ठुद्ध वंष्ठक्रम (Pure lines)**- ऐसे जीन जिनके भीतर सभी जीन के बल समयुग्मजी दष्ठा में ही होते हैं। इस जीन के अन्य ऐलील अनुपस्थित होते है।

**संकरण (Hybridisation)**- वांछित लक्षणों से युक्त जीवों का परस्पर प्रसंकरण (cross) संकरण कहलाता है। प्रसंकरित तीन भिन्न प्रजातियों (species) के सदस्य हो सकते हैं।

**एक संकर प्रसंकरण (Monohybrid cross)**

जीन के एक जोड़े के आनुवांष्ठिक प्रभाव अथवा किसी एक लक्षण को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन करने

हेतु प्रजाति विष्ठोष के 2 प्राणियों के बीच संकरण को एक संकर प्रसंकरण कहते है।

**द्विसंकर प्रसंकरण (Dihybrid cross)**

इसमें दो जोड़ी विपरीत लक्षणों के अध्ययन हेतु प्रसंकरण किया जाता है।

eg. पीले बीज YY ; हरे बीज - yy => बीजों का रंग

गोल बीज RR ; झुर्रीदार बीज - rr => बीजों का आकार

मैण्डेल के आनुवांष्ठिकता के नियम

**I. प्रभाविता अथवा प्रबलता का सिद्धांत/नियम (Law of Dominance)** – जन परस्पर विरोधी लक्षणों वाले दो ष्ठुद्ध जनकों के बीच संकरण कराया जाता है तो उनकी संतानों में विरोधी लक्षणें में से मात्र प्रभावी लक्षण (Dominant Trait) ही परिलाक्षित होता है।

| | ऊँचा पौधा | छोटा पौधा |
|---|---|---|
| | TT | tt |
| | T | T |
| t | Tt | Tt |
| t | Tt | Tt |

अप्रभावी गुण (Recessive Trait) परिलक्षित नहीं होता, परन्तु उपस्थित अवष्ठय होता है तथा $F_2$ पीढ़ी (दुसरी पीढ़ी) में परिलक्षित होता है।

**II. विसंयोजन/पष्ठक्करण का सिद्धांत (Law of sepregation)** इसे युग्मकों की ष्ठुद्धता का नियम (Law of Purity of gametes) भी कहते है।

लक्षण कारकों के जोड़े के दोनों कारक युग्मक (gamete) बनाते समय (अर्द्धसूत्री विभाजन द्वारा) पष्ठक हो जाते है तथा इनमें से केवल एक कारक ही किसी एक युग्मक में पहुँचता है।

**III. स्वतंत्र अपव्यूहन का सिद्धांत (Law of Independent Assortment)** यदि एक लक्षण की एक से अधिक जोड़ियों की वंष्ठागति का साथ-साथ अध्ययन किया जाए तो प्रत्येक जोड़ी लक्षणों के कारक अन्य जोड़ियों के कारकों से स्वतंत्र अपव्यूहित होते है। एक लक्षण की वंष्ठागति दूसरे को प्रभावित नहीं करती।

**एक संकरीय अनुपात (Monohybrid Ratio)**

$F_2$ में लक्षण प्ररूप अनुपात - 3 : 1

जीन प्ररूप अनुपात - 1 : 2 : 1

| Pure dominant | Hybrid dominant | Pure recessive |
|---|---|---|
| (TT) | (Tt) | (tt) |
| ष्ठुद्ध प्रभावी | प्रसंकर प्रभावी | ष्ठुद्ध अप्रभावी |

**द्विसंकरीय अनुपात (Dihybrid Ratio)**

$F_2$ में लक्षण प्ररूप अनुपात - 9 : 3 : 3 : 1

**Post Mandetion Development ( मैण्डेल के बाद )**

अपूर्ण प्रभाविता (Incomplete dominance) - 4 o'clock पौधे में (मीराबिलिस जलाया)

लाल पुष्प + सफेद पुष्प  गुलाबी पुष्प

बहुविकल्पी कारक (Multiple Alleles)

वह जीन जिनके दो से अधिक ऐलील होते है eg. मानव रक्त वर्ग 4 प्रकार के होते है - A, B, AB तथा O जो उनमें (RBC's पर) उपस्थित अथवा अनुपस्थित ग्लायकोप्रोटीन के आधार पर वर्गीकृत है।

**सहप्रभाविता (Co-dominance)** – जब दोनों ऐलील प्रभावी होते है eg. AB रक्त वर्ग

**बहुजीवी लक्षण (Polygenic traits)** – ऐसे लक्षण जो दो से अधिक जीवों द्वारा प्रभावित होते है eg. मानव त्वचा का रंग (उसमें विद्यमान melanin (मेलानिन) - a pigment की मात्रा पर निर्भर करता है। त्वचा में मेलानिन का निर्माण कम से कम तीन जीनों द्वारा निर्धारित होता है।

| | | |
|---|---|---|
| All dominant | AA BB CC | dark/black colour |
| All recessive | aa bb cc | white/fair colour |
| | Aa Bb Cc | intermediate colour |

इस प्रकार की वंष्ठागति को मात्रात्मक वंष्ठागति (Quantitative inheritance) कहते है।

**बहुप्रभावित्व (Pleiotropism)** - जब एक जीन एक से अधिक गुणें को प्रभावित करे।

**प्रबलता Epistasis ( संदमनकारी जीन )**

प्रबलता नॉन ऐलेलिक जीवों (अलग-अलग विस्थलों पर मौजूद जीन) के बीच अन्योन्य क्रिया होती है, जिसमें एक जीन अन्य जीवों की अभिव्यक्ति को आच्छादित अथवा संदमित कर देता है।

उस जीन को जो अन्य जीन को संदमित कर देता है, संदमनकारी अथवा प्रबल जीन कहते है, अपने आपको अभिव्यक्ति न करने वाले जीन को अबल (hypostate gene) कहते है।

यह कुछ वैसा ही है जैसा कि प्रभाविता और अप्रभाविता में होता

है। लेकिन प्रभावी और अप्रभावी कारक एक जीन के दो ऐलील होते है, जबकि प्रबल और अबल जीन एक ही लक्षण प्ररूप (phenotypo) का नियंत्रण करने वाले दो अलग-अलग जीन होते है।

**अप्रभावी प्रबलता - (Recessive Epistasis)**

अप्रभावी जीन के कारण उत्पन्न होने वाली प्रबलता को अप्रभावी प्रबलता कहते हैं। अर्थात् दो जोड़ी जीवों में से, अप्रभावी प्रबल जीन अन्य जीन विस्थल के प्रभावी जीन की क्रिया के आच्छादित कर देता है।

**मात्रात्मक वंष्ठागति (Quantitative Inheritance)**

यह अनेक जोड़ी प्रभावी जीवों के संचित प्रभाव से होती है जिसमें ये जीन एक समूह अथवा एक टीम के रूप में कार्य करते हैं eg. skin color in humans

**घातक जीन –**

उन जीनों को जो व्यक्ति को परिपक्वता प्राप्त करने से पहले ही मार देते है, घातक जीन कहा जाता है।

जीन जो केवल समयुग्मजी अवस्था में ही व्यष्टि को मार देते हैं, अप्रभावी घातक जीन कहते है और वे जीन जो विषमयुग्मजी अवस्था में व्यक्ति को मार देते हैं - प्रभावी घातक जीन कहा जाता है। eg. sickle cell anaemia (to be discussed later) (autosomal herdit disorder)

**वंष्ठागति का क्रोमोसोम सिद्धांत (Chromosonal Theory of Inheritance) –**

**सटन एवं बोबरी 1902**

1. जीव की दैहिक कोष्ठिकाओं (जो जाइगोट (युग्मज) के बारंबार विभाजनों से व्युत्पन्न हुई होती है) में क्रोमोसोमों (गुणसूत्रों) के दो सर्वसमान अर्थात् अभिन्न समुच्चय (set) पाए जाते हैं, अर्थात् वे द्विगुणित होते हैं। इनमें से गुणसुत्रों का एक समुच्चय माता से (मातष्क क्रोमोसोम) और दूसरा पिता से (पैतष्क क्रोमोसोम) प्राप्त हुए होते हैं। एक ही प्रकार के दो क्रामोसोमों से इनका समजात जोड़ा (homologous pair) बनता है।
2. समजात गैमीट (gamete - sexcells) बनने के समय समजात जोड़े के क्रोमोसोम अर्द्धसूत्री विभाजन द्वारा पष्थक हो जाते हैं।
3. अर्द्धसूत्री विभाजन के दौरान गुणसूत्रों के व्यवहार से ज्ञात होता है कि मेंडल के कारक अथवा जीन गुणसूत्रों पर रैखिक रूप से व्यवस्थित है।

**गुणसूत्र**

गुणसूत्र केंद्रक के भीतर पाये जाने वाले सूत्राकार पिंड होते हैं। यह क्रोमेटिन सामग्री अर्थात DNA के बने होते हैं। जीन इन्हीं पर स्थित होते हैं तथा लक्षणों का संचरण इन्हीं के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में होता है।

केन्द्रक में गुणसूत्रों की संख्या, क्रम तथा रचना प्रजाति विष्ठेष के लिए सुनिष्ठिचत होती है। eg.

| *जीव का नाम* | *गणसत्र संख्या* | | |
|---|---|---|---|
| मानव | 46 | => | 23 जोड़े |
| चिम्पैंजी | 48 | => | 24 जोड़े |
| गेहूं | 42 | => | 21 जोड़े |
| प्याज | 16 | => | 08 जोड़े |

सबसे छोटे गुणसूत्र - पक्षियों व कवक (furgi) में - = 0.25μ (माइक्रोन)

मनुष्य के गुणसूत्र की लम्बाई - $5\mu = 5 \times 10^{-6}$ m

यह केवल कोष्ठिका विभाजन के दौरान ही दिखाई पड़ते हैं।

**लिंगी गुण सूत्र (Sex Chromosomes) –**

लैंगिक भिन्नता युक्त द्विगुणित जीवधारियों (diploids) में कोई गुणसूत्र विष्ठेष (या उनका जोड़ा) लिंग निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसे लिंगी गुणसूत्र कहते हैं।

**अलिंगी गुणसूत्र (Autosomes) –** अन्य गुणसूत्र जो कायिक लक्षणों को / कार्य को निर्धारित करते हैं।

**समयुग्मकी (Hemogametic) –** जब किसी व्यष्टि में लिंगी गुणसूत्र आकारीय दष्टि से समान होते हैं तब उसे समयुग्मकी कहते हैं। ऐसी व्यष्टियों में केवल एक ही प्रकार के युग्मक बनते हैं। eg. मानव मादा (XX)

**विषमयुग्मकी (Heterogametic) –** जब किसी व्यष्टि में लिंगी गुणसूत्र आकारीय दष्टि से असमान होते हैं तब उसे विषमयुग्मकी कहते हैं। eg. मानव नर X & Y गुणसूत्र युक्त दो प्रकार के गैमीट बनते हैं।

**अगुणित कोष्ठिकायें (Haploid cells) –** n गुणसूत्र युक्त कोष्ठिकायें यह गैमीट्स होती है जिनका निर्माण अर्द्धसूत्री कोष्ठिका विभाजन से होता है।

द्विगुणित कोष्ठिकायें (Diploid cells) :- 2n गुणसूत्र युक्त कोष्ठिकायें।

**जीनोम (genome) –** n गुणसूत्रों पर स्थित जीनों का समुच्चय।

**सहलग्नता (Linkage) –** एक ही क्रोमोसोम पर मौजूद जीनों में एक साथ वंष्ठागत होने की प्रकृत्ति होती है। इस प्रकार के जीनों को सहलग्न (linked) कहते है, जीवों का ऐसा समूह सहलग्न समूह (linkage group) कहलाता है तथा यह परिघटना सहलग्नता (linkage) कहलाती है।

बेटीसन तथा पनेट (Beteson or Punett) के प्रयोग on sweat pea से यह घटना प्रकाष्ठा में आई।

**लिंग सहलग्नता (Sex linked inheritance)**

वे जीन जो लिंग सहलग्न गुणों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में ले जाते हैं sex linked genes (लिंग सहलग्न जीन) कहलाते हैं।

इसकी विस्तष्ठ व्याख्या Morgan (मॉर्गन) ने की थी।

लिंग सहलग्न जीन - 3 प्रकार के होते हैं

| | | |
|---|---|---|
| X - सहलग्न (X - linked) | - | on X Chromosome |
| आंष्ठिक सहलग्न | - | on both X & Y Chromosome |
| Holendri genes | - | on Y Chromosome |

**Theory of Jumping Genes :-**

**बारबरा मैकक्लिंटोक द्वारा प्रतिपादित**

। जम्पिंग जीन DNA के वह अंष्ठा है जो एक भाग से दूसरे भाग तक संचरण कर सकते है।

। **T.H. Morgan** ने सिद्ध किया कि मैंडेल के कारक (genes) के वाहक गुणसूत्र है। उसने Drosophile पर प्रयोग किये थे।

। **वाटसन तथा क्रिक** ने DNA की संरचना का वर्णन किया।

। **Tay-Sachs disease (टे-सैक्स रोग) –** यह एक घातक आनुवांष्ठिक रोग है जिसमें ganliosite CM2 नामक वसीय पदार्थ अधिक मात्रा में मस्तिष्कीय तंत्रिका कोष्ठिकाओं में एकत्रित हो जाता है।

। यह तभी संचारित होता है जब माता तथा पिता, दोनों ही इसके वाहक हो। इस रोग का कोई इलाज अभी तक नहीं है तथा अक्सर 5 वर्ष तक प्रभावित ष्ठिष्ठु की मष्ठ्यु हो जाती है।

। **एक जीन एक एंजाइम मत –** बीडल तथा टाटुम (Beadle & Tatum) एवं मेसलसन् तथा स्टाहल (Messelson & Stahl) - 1958 में DNA प्रतिकृति की अर्धसंरक्षी (semi-conservative) विधि का प्रायोगिक प्रमाण प्रस्तुत किया (Experiment on E-coli with $N^{15}$ & $N^{14}$ isotopes)

**सहलग्नता के प्रकार**

अपूर्ण सहलग्नता तथा पूर्ण सहलग्नता।

- अपूर्णसहलग्ता की स्थिति में, युग्मक बनते समय समजात गुणसूत्रों के बीच जीन विनिमय (Crossing over) होता है जिससे नये पुनर्योग (recombinant) बनते हैं और जीन अलग–अलग युग्मकों में चले जाते हैं।
- पूर्णसहलग्नता की स्थिति में एक गुणसूत्र पर स्थित जीन एक साथ एक ही युग्मक में जाते हैं।

**लिंग निर्धारण तथा लिंग सहलग्नी रोग**

**(Sex determination & Sex linked genetic deseases)**

- गुणसूत्र का वह जोड़ा, जो लिंग निर्धारण करता है, लिंगी गुणसूत्र (Sex chromosome) कहलाता है। शेष सभी गुणसूत्र अलिंगी गुणसूत्र (Autosome) कहलाते हैं।
- मानव में लिंगी गुणसूत्र के जोड़े को स्त्रियों में XX चिन्ह से दर्शाते हैं तथा पुरूष में XY से दर्शाते हैं।
- स्त्रियों में पाये जाने वाले लिंगी गुणसूत्र के जोड़े में समरूप (Identical) गुणसूत्र (XX) होता है वे एक ही प्रकार के युग्मक बनाती है इसलिए वे समयुग्मकी (Homoganetic) होती है।
- नर में पाये जाने वाले लिंगी गुणसूत्र के जोड़े में दोनों गुणसूत्र भिन्न–भिन्न प्रकार (XY) होते हैं। वे भिन्न प्रकार के युग्मक बनाते हैं इसलिए ये विषमयुग्मकी (Heteroganetic) होते हैं।

***उदाहरण–***

| स्त्रियों में बनने वाले युग्मक (XX) | | पुरूषों में बनने वाले युग्मक (XY) | |
|---|---|---|---|
| युग्मक (X) | (X) | युग्मक (X) | (Y) |

**मनुष्य में Y गुणसूत्र का कार्य**

- Y गुणसूत्र पर विशेष जीन TDF (Testis determining factor) होता है जो वृषण के परिवर्धन के लिए उत्तरदायी

होता है।

- यह आनुवंशिक रूप से निष्क्रिय माना जाता है इसपर बहुत कम जीन होते हैं।

**लिंग सहलग्नी रोग**

- लिंग सहलग्नी रोग विकृत जीन के कारण होते हैं। X जो गुणसूत्र पर पाए जाते हैं, ये रोग पुरूषों में अधिक व्यक्त होते हैं, क्योंकि पुरूषों में केवल एक X गुणसूत्र होता है और वे विकास के लिए अर्धयुग्मजी है। क्योंकि Y गुणसूत्र पर कोई विकल्प नहीं होता और अप्रभावी विकृत जीन व्यक्त हो सकती है।
- हीमोफिलिया, वर्णान्धता, पेशीय दुष्पोषण X गुणसूत्र पर पाई जाने वाली विकृत जीन से हो जाता है।

**हीमोफिलिया**– यह रोग रक्त के थक्के न जमने से होता है जिससे चोट लगने पर बहुत खून निकल जाता है।

**वर्णान्धता**– इस रोग में लाल और हरे रंग में भेद करने की क्षमता नहीं रहती।

**पेष्ठीय दुष्पोषण**– इसमें पेशीय दुर्बलता के कारण रोगी 20 वर्ष की आयु तक मर जाते हैं।

## आनुवांष्ठिक पदार्थ

- मानव में आनुवांशिक पदार्थ DNA है।
- गुणसूत्र (Chromosome) सभी वनस्पतियों और प्राणियों में पाये जाने वाले तंतु–नुमा पिंड, जो आनुवांशिक गुणों को निर्धारित करते हैं, उन्हें संचरित करते हैं। प्रत्येक प्रजाति में गुणसूत्र संख्या सुनिश्चित रहती है। मानव की प्रत्येक कोशिका में गुणसूत्रों के 23 जोड़े हैं।
- गुणसूत्र दो प्रकार के होते हैं:

**लिंगी गुणसूत्र**– वह जोड़ा जो लिंग निर्धारण करता है।

**अलिंगी गुणसूत्र**– शेष सभी गुणसूत्र अलिंगी गुणसूत्र होते हैं।

- जीवाणु का आनुवांशिक पदार्थ – अकेला गोलाकार DNA का अणु होता है।
- विषाणु का आनुवांशिक पदार्थ–
  - TMV (Tobacco mosaic virus)- RNA आनुवांशिक पदार्थ होता है।
  - $\phi_x$ 174 मे एक लड़ी वाली DNA आनुवंशिक पदार्थ होता है।
- यूकैरियोटिक जीवों में आनुवांशिक पदार्थ DNA है।
- DNA की दुहरी कुंडली वाला मॉडल **जेम्स वाटसन** और **फ्रांसिस क्रिक** ने प्रस्तुत किया था।
- **मॉरिस विलकिन्स** ने X-ray विवर्तन पद्धति से DNA का चित्रण किया।
- DNA का प्रत्येक अणु दो कुण्डलित पॉलिन्यूक्लिटाइड श्रृंखलाओं का बना होता है।
- पॉलिन्यूक्लिटाइड नाइट्रोजनी क्षारक, पेन्टोस शर्करा, (डी ऑक्सीराइबोस) तथा फॉस्फेट से मिलकर बनते हैं।
- DNA में चार प्रकार के क्षारक उपस्थित होते हैं–

i) एडीनीन ii) गुआनीन

iii) थायमीन iv) साइटोसीन

- DNA की दो श्रृंखलाएं एक दूसरे पर सर्पिल क्रम में लिपटी होती हैं।
- दोनों श्रृंखलाएं प्रतिसामानान्तर दशा में कुण्डलित होती हैं अर्थात एक श्रृंखला 5′–3′ रूप में तथा दूसरी 3′–5′ रूप में
- एक श्रृंखला के प्यूरीन (अर्थात् एडीनीन, थायमीन) दूसरी श्रृंखला के पिरिमीडिन अर्थात् (गुआनीन, साइटोसीन) से जुड़े रहते हैं। जिसमें एडिनीन (A) सदैव, थायमीन (T) से दो हाइड्रोजन बंध से जुड़ा होता है तथा गुआनीन (G) सदैव, साइटोसीन (C) से तीन हाइड्रोजन बंध द्वारा जुड़ा रहता है।
- प्रत्येक श्रृंखला के दो न्यूक्लियोटाइड के बीच फॉस्फोडाइऐस्टर बन्ध बनता है।

### DNA का पुनरावर्तन (DNA replication)

- कोशिका विभाजन के समय DNA का अणु स्वयं का द्विगुणन करता है जिससे DNA के एक अणु से दो अणु बनते हैं। जो विभाजन के दौरान दो संतति कोशिकाओं में बराबर मात्रा में पहुँच जाता है।
- पुनरावर्तन के दौरान दोनों श्रृंखलाएं अलग–अलग हो जाती है और दोनों टैम्पलेट का कार्य करती हैं तथा यह फैसला करती हैं कि नई लड़ियों पर स्थित होने वाले क्षार कौन से होंगे। इसके पश्चात् दोनों नये संतति DNA में एक पुरानी श्रृंखला तथा एक नई श्रृंखला होती है। इसे अर्द्ध संरक्षी प्रतिकृतिकरण भी कहते हैं।
- DNA का संश्लेषण 5′–3′ श्रृंखला पर सतत होता है तथा

3′–5′ श्रृंखला पर छोटे–छोटे खंडो में बनता है जिन्हे ओकाजाकी खंड कहते हैं।

### सेन्ट्रल डोगमा

### *(Central Dogma)*

- DNA में निहित सूचना का RNA के माध्यम से प्रोटीन में अनुवाद होता है। परन्तु कुछ विषाणु RNA से DNA का निर्माण भी कर सकते हैं। जिसे इस प्रकार दिखाया जा सकता है। RNA से DNA निर्माण को विलोम अनुलेखन कहते हैं।

अनुलेखन अनुवाद

DNA → RNA → प्रोटीन

Transcription Translation

विलोम अनुलेखन

Reverse transcription

**अनुलेखन (Transcription)**- सूचना का DNA से RNA को प्रवाह।

- पॉलिपेप्टाइड के संश्लेषण के लिए सम्पूर्ण सूचना गुणसूत्रों पर स्थित जीन में होती है।
- DNA से पॉलिपेप्टाइड श्रृंखला तक सूचना के वाहक का कार्य mRNA करता है। इसे दूत RNA (messenger RNA) कहते हैं।
- DNA से RNA बनने की प्रक्रिया को अनुलेखन कहते हैं।
- इस प्रक्रिया में DNA की एक लड़ी से पूरक RNA बनता है। इसके प्रक्रिया को उत्प्रेरित RNA पालिमरेज नामक एंजाइम करता है।
- तीन अलग–अलग प्रकार के RNA पॉलिमरेज से mRNA, rRNA तथा tRNA का संश्लेषण होता है। ये तीनों प्रोटीन संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

**अनुवाद (Translation)-** RNA से प्रोटीन का बनना

- इस प्रक्रिया में mRNA से प्रोटीन बनता है।
- mRNA में स्थित क्षारों का क्रम प्रोटीन में अमीनो अम्ल के क्रम को निर्धारित करता है।
- प्रत्येक अमीनो अम्ल के लिए RNA पर एक त्रिक कोड होता है जिसे अनुवांशिक कूट (Genetic Code) कहते हैं।
- इस प्रक्रिया में तीन प्रकार के RNA (mRNA, rRNA, tRNA), राइबोसोम, कुछ एंजाइम तथा प्रोटीन कारक भाग लेते हैं।

### जीन नियमितकरण (Gene regulation)

- कोशिका में सभी-जीन हर समय प्रकार्यात्मक नही होते कुछ की अभिव्यक्ति होती है और कुछ शान्त (silent) रहते हैं। किसी न किसी प्रकार इनका नियमन होता है। इसका पता ऑपरेन संकल्पना की खोज के पश्चात् चला।

### आनुवांष्ठिक विकार (Genetic diseases)

- ये विकार गुणसूत्र संख्या या संरचना में किसी बदलाव या जीन अपरिवर्तन (mutation) के कारण होते हैं। ये वंशानुगत होते हैं।

### कुछ रोग

- **क्री डु चैट संलक्षण (Cri-du-chat syndrome)**

**कारण**- गुणसूत्र 5 की कुछ भाग के विलोपन से उत्पन्न।

**लक्षण**- शिशु का बिल्ली की तरह रोना।

- **एडवर्ड संलक्षण (Edward syndrome)**

**कारण**- गुणसूत्र 18 की एकाधिसूत्रता के कारण इसमें गुणसूत्र-18 त्रिक में होता।

**लक्षण**- मानसिक न्यूनता, सभी अंग तंत्र प्रभावित होना। 6 माह से पहले शिशु की मृत्यु।

- **क्लिनेफेल्टर संलक्षण (Klinefelter syndrome)**

**कारण**- नर में एक X गुणसूत्र बढ़ जाता है जिससे लिंग गुणसूत्र की संख्या XXY तथा कुल गुणसूत्र–47 हो जाते हैं।

**लक्षण**- शरीर का विकास स्त्रियों के समान, वृषण और जनन अंग ठीक से विकसित नहीं हो पाते।

- **टर्नर संलक्षण (Turner's syndrome)**

**कारण**- स्त्रियों में X गुणसूत्र की कमी, लिंग गुणसूत्र की संख्या XO तथा कुल गुणसूत्र–45

**लक्षण**- स्त्रियाँ नाटे कद की, मंद बुद्धि

- **दात्र कोष्ठिका रक्तता (Sickle cell anaemia)**

**कारण**- एक अप्रभावी जीन की समयुग्मजी अवस्था के कारण।

**लक्षण**- अपसामान्य हीमोग्लोबिन अणु, खून की कमी।

## जैव प्रौद्योगिकी (Biotechnology)

- जैव तकनीक ऐसी विधि है जिसमें औद्योगिक प्रक्रमों में सजीवों तथा उनसे प्राप्त पदार्थों का उपयोग होता है।
- सजीव, जिनका उपयोग किया जा सकता है, वे हैं बहुकोशिकीय पशु जैसे सुअर, चूहा या एक कोशिकीय जीव जैसे यीस्ट।
- जैव प्रौद्योगिकी से प्राप्त उत्पाद हैं– एल्कोहल, एंजाइम, एंटिबायोटिक, वैक्सिन, हार्मोन, एमीनोएसिड आदि
- किण्वन, जैव प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत यीस्ट द्वारा ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में किण्वन क्रिया करने की क्षमता का उपयोग किया जाता है। किण्वन क्रिया द्वारा प्राप्त उत्पाद हैं- एथोनोल, एमिलएल्कोहल, फिनाइल एथानोल, ग्लिसरोल, ऐसटिक एसिड, पिरूविक एसिड, लैक्टिक एसिड आदि। किण्वन क्रिया में कच्चे माल के रूप में शक्कर, मंड, सेल्यूलोज आदि प्रयोग में लाये जाते हैं।
- एंजाइम प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत एन्जाइम को जीवित कोशिकाओं से पात्रे (in vitro) यानी पृथक करके उनका उपयोग किया जाता है, उदाहरण– सूअर के अग्नाशयी से लाइपेस एंजाइम, घोड़े के यकृत से ऐल्कोहल डिहाइड्रोजीनेस आदि प्राप्त किया जा सकता है।

### कुछ एंजाइम के प्रयोग

- **प्रोटियाज–** डिटरजेंट बनाने में काम आता है, जो प्रोटीनजनित धब्बे हटाने के काम आता है।
- **रिनेट** का उपयोग पनीर बनाने के लिए किया जाता है।
- **TPA** रूधिर के थक्के घोलने में काम आता है यह हृदय आघात के रोगों में किया जाता है।

- जैव प्रौद्योगिकी द्वारा विटामिन भी बनाये जा सकते हैं। उदाहरण Vitamin $B_{12}$ जंगली बैक्टिरिया द्वारा किण्वन के समय उत्पन्न किया जा सकता है।
- कुछ सूक्ष्मजीवी जैसे राइजोपस स्टोलोनीफर नामक कवक स्टेराइड की रचना में परिवर्तन करके अन्य स्टेराइड हार्मोन बनाने में मदद करते हैं। इनका उपयोग हार्मोन असंतुलन को ठीक करने में किया जाता है, उदाहरण- इस्ट्रोजन और प्रोजैस्ट्रोन का उपयोग गर्भ निरोधक गोलियां बनाने में किया जाता है।
- डायबीटिज के उपचार के लिए इन्सुलिन सुअरों के Pancreas से प्राप्त होती है। आनुवंशिक इंजीनियरिंग के द्वारा ह्यूमन इंसुलिन (ह्यूमूलिन) भी बनाया जा सकता है।
- कृत्रिम पेपटाइड्स के प्रयोग वाली एलिसा प्रणाली (ELISA) का विकास HIV का पता लगाने के लिए किया जाता है।
- जंतु जीव प्रौद्योगिकी के अंतर्गत भ्रूण हस्तांतरण, भ्रूण परिवर्धन पोषण, स्वास्थ्य, रोगों के निदान, परख नली में निषेचन के माध्यम से पशुओं की नस्लें विकसित की जा सकती है।
- कुछ सूक्ष्मजीव विकसित किये गये हैं जो हाइड्रोकार्बन का अपघटन कर सकते हैं। इस प्रकार का कूड़ा–करकट जो हाइड्रोकार्बन का बना हो उसका अपघटन कराकर जैविक सफाई की जा सकती है।
- ऐसे जीवधारी का उपयोग बढ़ा है जो जैव कीटनाशी की तरह उपयोग में लाये जा सकते हैं, जैसे– बैसिलस ट्यूरिएनजिएसिस इजरालेन्सिस नामक जीवाणु में पाया जाने वाला एक प्रोटीन कीट की आंत मे घुलकर पूरे शरीर में पहुँच जाता है और विषाणु का काम करता है।
- प्रतिजैविकों का उत्पादन किण्वन विधि द्वारा किया जा सकता है जैसे पैनिसिलिन, स्ट्रेप्टोमाइसीन, एरिथ्रोमाइसिन, जेन्टामाइसिन।
- खाद्य टीके विकसित किये जा सकते हैं, जैसे– टमाटर के अन्दर हैजे की वैक्सीन विकसित करना।

## जीन-अभियांत्रिकी (Genetic engineering)

- जीन–अभियांत्रिकी जैव–प्रौद्योगिकी की शाखा है इसके अंतर्गत जीनों का संलयन, विलोपन, प्रतिलोपन और पक्षान्तरण किया जाता है। इसे रिकॉम्बीनेट DNA तकनीक भी कहा जाता है। क्योंकि इसके अंतर्गत एक या एक से अधिक जीनों से युक्त DNA को एक कोशिका से निकाल कर दूसरी कोशिका के DNA से जोड़ दिया जाता है।

**जीन-अभियांत्रिकी की उपयोगिता**

- यह तकनीकी इंटरफेरोन, वैक्सीन, हार्मोन आदि जैसे विशेष प्रोटीन बनाने में महत्वपूर्ण है। इंटरफेरोन मानव की शरीर द्वारा निर्मित शक्तिशाली प्रतिविषाणु कारक एजेन्ट है। यह विषाणुरोधी तथा कैंसररोधी प्रोटीन होने के कारण आदि औद्योगिक रूप से बड़े पैमाने पर उत्पादित होने लगे तो औषधियों के क्षेत्र में क्रांति आ जाएगी।

**जीन-अभियांत्रिकी के औजार**

- जीन स्थान्तरण के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपकरणों की आवश्यकता होती है, वे हैं:

  i) **प्रतिरोधी-ऐन्डोन्यक्लिएज** (Restriction endonucleases) ये एन्जाइम प्लास्मिड तथा दाता जीव के DNA अणु को विशिष्ट बिन्दुओं पर तोड़ते हैं।

  ii) **DNA लाइगेस**- ये DNA के टूटे हुए सिरों को जोड़ते हैं।

  iii) **वाहक या वेक्टर**- जीन स्थान्तरण के लिए वाहक प्रयोग में लाये जाते हैं जो DNA के अंशो को कोशिकाओ में पहुँचाते हैं BACs (Bacterial Artificial chromosome) तथा YACs (Yeast Artificial chromosome) यूकैरयोटिक जीन स्थानांतरण में सक्षम हैं।

इसके अलावा प्लास्मिड तथा विषाणु भी जीन स्थानांतरण में सक्षम है।

**जीन-अभियांत्रिकी की प्रक्रिया**

- इस प्रक्रिया के अन्तर्गत E coli के प्लास्मिड में कोई मानव जीन उदाहरणस्वरूप इंसुलिन जीन को प्रतिरोधी एंजाइम तथा लाइगेस एंजाइम की मदद से जोड़कर दुबारा से E coli में प्रवेश करा दिया जाता है। जब इन जीवाणुओं में आनुवंशिक पदार्थ का अनुलेखन होता है तभी मानव जीन का भी अनुलेखन होता है। और जब जीवाणु मे प्रोटीन संश्लेषण होता है, तो उसी समय इंसुलिन भी निर्मित होता है। और यह इंसुलिन जीवाणु से निष्कासित करके शोधित कर लिया जाता है।

Gupta Classes

# 15. जीवन का उदभव

जीवन की उत्पत्ति लगभग 36,000 लाख वर्ष पूर्व हुई। इसका प्रमाण साइनोबैक्टिरिया के जीवाश्म से मिलता है।

जीवन की उत्पत्ति से सम्बन्धित कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित हुए-

1. **स्वतः जनन का सिद्धान्त**- यह सिद्धान्त **अरस्तू** द्वारा दिया गया था। इस सिद्धान्त के अनुसार सजीवों की उत्पत्ति अजैव पदार्थों से यकायक हुई।
2. **आपरेन हाल्डेन सिद्धान्त**- रूसी जीवरसायनज्ञ **ए. आई. आपरेन** ने बताया कि जीवन का उद्‌गम रासायनिक विकास का अंतिम परिणाम है। इसके अनुसार आद्य पृथ्वी का वातावरण अपचायक था। उसमें पदार्थ गैस रूप में थे, जैसे– नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, मीथेन, अमोनिया वाष्प आदि और इन परिस्थितियों में शर्करा, न्यूक्लिक एसिड, अमीनों अम्लों का निर्माण हुआ। इनके बहुलकों के समूह से प्रथम कोशिका का निर्माण हुआ। जिसे Coacervate कहते हैं।

## जैव विकास *(Organic Evolution)*

### जैव विकास की पुष्टि हेतु कुछ प्रमाण

### 1. जीवाष्म विज्ञान प्रमाण

जीवाश्म जीवों के वर्गों के बीच सम्बन्ध बताता है।

जैसे-

i) **आर्कियोप्टेरिक्स**- यह जीवाश्मरूप सरीसृपों से पक्षियों के विकास के बारे में बताता है।

ii) **प्रोटोप्टेरस**- यह जीवाश्मरूप जलस्थलचर से मत्स्यों के विकास के बारे में बताता है।

iii) **प्लेटीपस**- यह जीवाश्मरूप स्तनी वर्ग के जन्तुओं का सरीसृपों के विकास के बारे में बताता है।

### 2. तुलनात्मक आकारिकी तथा ष्ठारीरिक प्रमाण

इसके अन्तर्गत समजात तथा समवृति अंगों का अध्ययन कर जैव विकास की पुष्टि की जा सकती है।

- **समजात अंग**- वे अंग जिनकी मौलिक संरचना तथा उत्पत्ति समान है लेकिन अलग-अलग जीवों में इनके कार्य अलग हैं।

  ***उदाहरण–*** सील के फ्लीपर, चमगादड़ के पंख, बिल्ली का पंजा तथा मुनष्य के हाथ की मौलिक रचना समान है पर सील के फ्लीपर तैरने के लिए, चमगादड़ के पंख उड़ने के लिए मनुष्य का हाथ वस्तु पकड़े के लिए अनुकूलित है।

- **समवष्ति अंग**- ऐसे अंग जो समान कार्य के लिए हो, परन्तु उनकी संरचना तथा उत्पत्ति विभिन्न हो जैसे- कीट के पंख तथा पक्षियों के पंख, मछलियों के पंख, सील के फ्लीपर तथा ह्वेल के चप्पू जल में तैरने का कार्य करते हैं।

- **अवष्ठेषी अंग**- कुछ अंग प्राणियों में क्रियाविहीन होते हैं, फिर भी ये रचनायें हजारों वर्षों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही है।

  जैसे- मनुष्य में परिशेषिका, निमेषक पटल, आदि ऐसे अवशेष अंगों को पूर्वजों के अंगों का अवशेष समझा जाता है।

### 3. भ्रूणीय प्रमाण

- कशेरूकियों की शुरू की परिवर्धनात्मकता को देखकर यह पहचानना मुश्किल है कि वह किस समूह का है क्योंकि विभिन्न कशेरूकियों के भ्रूण विकास के क्रम में बहुत समानता है, उदाहरण- क्लोमविदर तथा नोटोकॉर्ड सभी कशेरूकियों (मछली से स्तनधारी) के भ्रूणीय विकास में पाये जाते हैं।
- वयस्क कशेरूकियों में नोटोकॉर्ड मेरूदंड में परिवर्तित हो जाते हैं। इसके अलावा मेंढ़क, सरीसृप, पक्षी तथा स्तनधारियों (मानव) में प्रारम्भिक भ्रूणावस्था में गिल दरारें व द्विकोष्ठी हृदय पाये जाते हैं। परन्तु परिवर्धन के दौरान मानव में गिल दरारें लुप्त हो जातीं हैं और फेफड़े विकसित हो जाते हैं। इस प्रकार जीव परिवर्धन के दौरान उन सभी अवस्थाओं से गुजरता है जिनसे उसके पूर्वज गुजरे थे।
- विभिन्न प्रकार के जीवों में जैव प्रक्रियाएं जैसे ऊर्जा का लेना, वृहदाणु का संश्लेषण, उपापचयी क्रियाएं समान होती हैं। और इसके अलावा जनन के आवश्यक सोपान, आनुवंशिक कोड प्रोटीन संश्लेषण–प्रक्रिया, विभेदन आदि भी सूक्ष्म जीवों, पौधों तथा जन्तुओं में एक समान हैं।

## जैव विकास के सिद्धान्त

- जैव विकास को समझने के लिए अलग-अलग वैज्ञानिको के कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित हुए, वे उल्लेखनीय हैं:

### 1. उपार्जित लक्षणों की वंष्ठागति का सिद्धान्त

- यह सिद्धान्त **लैमार्क** नामक जीव वैज्ञानिक ने प्रतिपादित किया। इसके अनुसार प्रत्येक वातावरण की अपनी विशेष जरूरतें होती हैं और जीव उनको पूरा करने का प्रयत्न करता है। इन प्रयत्नों के कारण कुछ ऊतकों और अंगों का उपयोग-अनुपयोग हुआ। जिससे जीवों में कुछ रूपांतरण हुए। ये रूपान्तरण (विभिन्नता) वंशागत होते हैं। इस धारणा को **लेमार्किस्म** या उपार्जित लक्षणों का वंशागति सिद्धान्त कहते हैं।
- जर्मन वैज्ञानिक **ए वाइसमैन** ने चूहो पर प्रयोग किया जिसमें उसने कई पीढ़ियो तक उनकी पूँछ काटी, लेकिन हर पीढ़ी पूँछ सहित पैदा हुई। इस तरह यह सिद्धान्त गलत साबित हुआ।

### 2. प्राकष्ठतिक चयन का सिद्धान्त ( डार्विन सिद्धान्त )

- यह सिद्धान्त **डार्विन** और **वालेस** द्वारा दिया गया। इस सिद्धान्त के अनुसार सभी प्राणी जरूरत से ज्यादा संततियाँ पैदा करते हैं। जिस कारण प्रतिस्पर्धा होती है। इस जीवन संघर्ष (struggle for existence) में सिर्फ योग्यतम ही जीवित रह जाते हैं। ऐसे जीवों का वरण (selection) प्रकृति द्वारा होता है। कोई दो जीवधारी एकदम एक जैसे नहीं होते और प्रकृति योग्यतम का वरण करती है। उपयोगी विभिन्नताएँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी इकट्ठी होती रहती हैं। जिससे नई जाति का सृजन होता है।

### 3. उत्परिवर्तन का सिद्धान्त

- यह सिद्धान्त **ह्यूगो डि रीज** द्वारा दिया गया। उन्होनें ईवनिग प्राइमरोज पर प्रयोग किए और पता लगाया कि नयी जातियों की उत्पत्ति एक ही बार स्पष्ट तथा स्थाई यानी वंशागत, आकस्मिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप होती है। आकस्मिक परिवर्तन जो वंशागत होते हैं, उत्परिवर्तन (mutation) कहलाते हैं।

## मानव विकास (Human Evolution)

- मनुष्य का विकासीय इतिहास जीवाश्म के अध्ययन तथा आण्विक समजातता पर आधारित है। होमोनिड का सबसे प्राचीन जीवाश्म रामापिथीकस तथा शिवापिथीकस का है जिसे अफ्रीका तथा एशिया से प्राप्त किया गया है। आस्टेलोपिथिकस का पाँच मिलियन वर्ष पुराना जीवाश्म जिसका उदय उपरोक्त स्टॉक से हुआ था, में मस्तिष्क का माप 350 से 450 घन सेमी था। आस्टेलोपिथिक्स से होमी जीनस का उदय हुआ जिसमें मस्तिष्क के माप (1400-1450 घन सेमी) में चरणबद्ध वृद्धि हुई।
- मनुष्य का उदय अफ्रीका तथा एशिया में हुए होमो जीनस का क्रमवार विकास है।

1. होमोहैबिल्स, होमोइरेक्टस, होमोसेपियस, निएंडर थालेंसिस तथा हो सेपियस सेपियंस।

   मनुष्य के विकास की धारणा इस प्रकार रही:

   i) दो टांगो पर चलने वाला।

   ii) सीधा खड़े रहने वाला।

   iii) मस्तिष्क के माप में वृद्धि।

   iv) दो टांगो पर चलने के कारण हाथों का उपयोग (जिसका उपयोग चलने में नहीं किया जाता) औजार बनाने में होने लगा।

- आधुनिक मनुष्य (होमोसेपियंस सिपियंस) सारे संसार में फैल गए।
- DNA की मात्रा, क्रोमोसोम की संख्या तथा इनका बैंडिग पैटर्न को देखकर पता लगता है कि विशालकाय कपियों तथा मनुष्य के पूर्वज एक ही थे।

Gupta Classes